व्रजलीला

इंद्रद्युम्न स्वामी

विषय सूची

भूमिका

अक्तुबर 13,1994 को मेरी 19 वर्षीय प्रिय शिष्या व्रज लीला दासी ने अपना शरीर श्री वृंदावन धाम में त्याग दिया था। श्रील प्रभुपाद और भगवान् कृष्ण की कृपा से, पावन नामों का जप करते हुए, कई अन्य वैष्णव तथा मैं, उस समय उसके साथ थे।

एक वर्ष पहले, जब वह ल्यूकेमिया से पीड़ित थी, वह अपनी गुरुबहन गंधर्विका गिरधारी दासी के साथ वृंदावन चली गई थी ताकि वे अपने अवश्यंभावी प्रस्थान की तैयारी कर सके। जीने तथा शरीर त्यागने के लिये श्री वृंदावन धाम से बढ़कर और कौनसा स्थान हो सकता है। श्रील प्रभुपाद लिखते हैं:

"हमें वृंदावन जाकर श्री गोविंद की शरण लेनी चाहिये। इससे वे प्रसन्न होंगे। अतः अंतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ श्रीकृष्ण-बलराम मंदिर का निर्माण कर रहा है, जिससे उसके सदस्य व बाहर के लोग यहाँ आएँ और एक आध्यात्मिक वातावरण में शांतिपूर्वक रह सकें। यह उन्हें दिव्य जगत की अनुभूति कराने में और वापस भगवद्धाम ले जाने में सहायक होगा।" (श्रीमद् भागवतम् 5.13.8 तात्पर्य)

भक्तों से सम्पर्क

अध्याय 1

व्रजलीला दासी का जन्म 19 दिसम्बर,1974 को रूस में हुआ था। वह कृष्णभावना आंदोलन के सम्पर्क में अगस्त 1991 में आई। उसने अपने देह त्यागने से कुछ ही दिन पहले एक युवा पत्रिका में लेख लिखा था, जिसमें उसने वर्णन किया था कि वे भक्तों से पहली बार कैसे मिली।

“भक्तगण हमेशा अपने सच्चे प्रयासों से भगवान् और उनके प्रतिनिधियों को संतुष्ट करने की कोशिश करते हैं। यह भाव रूसी भक्तों में पुस्तक वितरण मैराथन के दौरान विशेष रूप से दिखाई देता है। ये रूसी भक्त युवा हैं और ऊर्जा से ओत प्रोत हैं। श्रील प्रभुपाद की पुस्तकें जब उनके हाथों में होती हैं तो वे आत्मविशवास का अनुभव करते हैं कि वे भौतिकता में डूबे हुए लोगों का हृदय द्रवित करने में सफल होंगे। मेरा हृदय परिवर्तन भी ऐसी ही एक मैराथन के दौरान हुआ था और फलस्वरूप मैं उस पथ पर चल पड़ी थी जो मुझे मेरे गुरूदेव, श्रील इन्द्रद्युम्न स्वामी महाराज के चरणकमलों के आश्रय की ओर ले आया था।

“भक्त बनने से पहले मैं अपने जीवन का लक्ष्य जानने के लिए मॉस्को की सड़कों पर भटकती रहती थी। कभी-कभी मैं संग्रहालय जाती और प्राचीन सभ्यताओं का अध्ययन करती। और कभी मैं सिनेमाघर जाकर शिक्षाप्रद फिल्में देखती या थियेटर जाकर नाटक देखती। जीवन के विभिन्न दर्शनों की खोज में मैं हर दिन पुस्तक की दुकानों में घण्टों बिताती। मैं शीघ्र ही यह अनुभव करने लगी कि मुझे एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो मेरे अनेक प्रश्नों का उत्तर दे सके और मुझे जीवन का उद्देशय बता सके।

एक दिन मैं मॉस्को के सबवे (भूमिगत मार्ग) में हरे कृष्ण भक्तों से मिली। उस सबवे के स्टेशन में प्रवेश करने पर, वहाँ मैंने दो लड़को को देखा जो उत्साहपूर्वक लोगों के एक समूह को प्रचार कर रहे थे। एक विशाल किताबों का ढेर उनके पीछे दिखाई पड़ रहा था जिसकी ऊँचाई उनके सिरों से भी ऊपर थी। दूसरे लोग भी वहाँ सामान बेच रहे थे; वहाँ एक आदमी दान पाने के लिए गा भी रहा था। किन्तु मैं तो बस भक्तों की ओर आकर्षित हो रही थी।

जैसे मैं निकट आई, उनमें से एक भक्त मेरे पास एक पुस्तक लेकर आया। उसने कहा, 'कृपया यह भगवद्गीता ले लीजिए। यह वैदिक ज्ञान हमारे गुरूदेव ने हमें दिया है। यह पुस्तक आपके भी सभी प्रश्नों का उत्तर दे सकती है और आपको जीवन के उद्देश्य से अवगत करा सकती है।' मैंने पूछा कि वह पुस्तक कहाँ से आई। मुझे श्रील प्रभुपाद का चित्र दिखाते हुए वह बोला, 'इसका अनुवाद हमारे आंदोलन के संस्थापक श्रील प्रभुपाद ने किया है। वे कृष्णभावना को भारत से पश्चिमी देशों में लाए हैं।'

"मैंने वह पुस्तक खरीद ली और श्रील प्रभुपाद के तात्पर्यो के अनुसार उसे समझने का प्रयास करने लगी। श्रील प्रभुपाद के एक वाक्य ने विशेष रूप से मुझे बहुत प्रेरणा दी। वे लिखते हैं कि यदि कोई भगवद्गीता यथारूप को समझने के लिए गम्भीर है, तो उसे कृष्णभावना आंदोलन का आश्रय लेना चाहिए।

"यह पढ़ते ही मैं तुरन्त उस संस्था के मंदिर गई और वहाँ कई अद्‌भुत भक्तों से मिली। वहाँ लगभग सभी मेरी ही तरह श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों से प्रेरणा पाकर आए हुए थे।

"इस प्रकार, उन भक्तों की प्रसन्नता का कारण भी मैं समझ पाई। उनकी प्रसन्नता का कारण था कि वे श्रील प्रभुपाद की कृपा को अन्यों के साथ बाँट रहे थे। हालांकि उन्हें उस नरक तुल्य सबवे में दिन प्रतिदिन जाना होता था, किन्तु उनकी सेवा की भावना देखकर लोगों का हृदय द्रवित हो जाता था और वे उनसे पुस्तकें खरीद लेते थे। यहाँ तक कि नए-नए भक्तगण भी, श्रील प्रभुपाद के प्रति समर्पित होने के कारण, कई पुस्तकें आसानी से वितरित कर पा रहे थे।

"मैंने यह किस्सा संकीर्तन आंदोलन से जुड़े भक्तों का यशगान करने के लिए सुनाया है। मेरी प्रार्थना है कि जो भक्तगण पुस्तक वितरण की सेवा आरम्भ करना चाहते हैं वे इन भक्तों से प्रेरणा लें। दुनिया के हर देश में न जाने कितनी लोग आपकी कृपा की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

कृष्णभावनामृत से जुड़ना

अध्याय 2

गंधर्विका गिरिधारी: व्रजलीला द्वारा भगवद्गीता प्राप्त करने और मंदिर में भक्तों से मिलने के कुछ दिनों बाद, मॉस्को में एक बड़ी रथ-यात्रा का आयोजन हुआ। वह उत्सुकतावश उस उत्सव में गई और यात्रा आरम्भ होने से कुछ ही देर पहले वहाँ पहुँची। इन्द्रद्युम्न महाराज एक बड़े समूह को, जो रथ के चारों ओर एकत्रित हो गया था, लेक्चर दे रहे थे। जैसे व्रजलीला रथ के पास आई उसने उन्हें यह कहते हुए सुना कि भगवान् जगन्नाथ पतित बद्धजीवों के प्रति अत्यंत दयालु हैं और जो उनसे प्रार्थना करता है वे उसपर विशेष कृपा करते हैं। इसका उसपर बहुत प्रभाव पड़ा, और वह भगवान् जगन्नाथ के पास गई और उनसे बड़ी निष्ठा से "विशेष कृपा" के लिए प्रार्थना करने लगी।

अगले दिन वह फिर मॉस्को के मंदिर गई। वह वहाँ तब पहुँची जब इन्द्रद्युम्न महाराज श्रीमद्भागवतम् से प्रवचन कर रहे थे। वे श्रील प्रभुपाद के शिष्य जयनंद प्रभु की कहानी सुना रहे थे। ल्यूकेमिया से बेहद पीड़ित होने के बावजूद, जयनंद प्रभु ने अपने गुरुदेव को प्रसन्न करने के लिए अमरीका में एक बड़ी रथ-यात्रा की तैयारी के लिए बहुत परिश्रम किया था। उसने बड़े ध्यान से सुना और जयनंद प्रभु की आध्यात्मिक दृढ़ता को सुनकर बड़ी प्रभावित हुई। ल्यूकेमिया से स्वयं पीड़ित होने के कारण, वह जयनंद प्रभु की भक्तिमय सेवा से बहुत प्रेरित हुई। वह इन्द्रद्युम्न महाराज से भी बड़ी प्रेरित हुई और बाद में उसने मुझे बताया कि उसे लगा कि भगवान् जगन्नाथ ने उसकी प्रार्थनाएँ सुन लीं क्योंकि उन्होंने उसे रथ यात्रा के एक दिन बाद ही उसके आध्यात्मिक गुरु के चरणकमलों तक पहुँचा दिया।

कुछ दिनों बाद उसने आंदोलन से जुड़ने का फैसला कर लिया। वह उस समय केवल 16 वर्ष की थी और वह यूक्रेन के एक मंदिर में रहने चली गई। केवल कुछ ही हफ्तों में वह आठ अन्य महिलाओं के साथ, जो श्रील प्रभुपाद की पुस्तकें वितरीत करती थीं, संकीर्तन यात्राओं पर जाने लगी। उसे इस सेवा में बहुत आनंद आया, किन्तु चार महीनों बाद ल्यूकेमिया के कारण उसे अपनी सेवा स्थगित करनी पड़ी और वह मॉस्को वापस चली गई।

अष्ट सखी दासी: इस्कॉन में आने के एक वर्ष बाद मेरी गुरुबहन व्रजलीला हमारे सेंट पीटर्सबर्ग के मंदिर में रहने लगी। भक्ति में नई होते हुए भी, सभी भक्तों ने उसके उत्कृष्ट गुणों को सराहा। वह बहुत विनम्र थी और सदैव हमारे गुरुदेव को प्रसन्न करने का प्रयास किया करती थी, हालांकि अपने रोग के कारण वह कोई बड़ी सेवा नहीं कर पाती थी। जो भी थोड़ी बहुत सेवा उसे मिलती वह उसे अच्छे से अच्छे तरीके से, हर छोटी बड़ी बारीकी का ध्यान रखते हुए करने का प्रयास करती।

एक बार जब श्रील गुरुदेव हमारे मंदिर आए, उन्होंने भक्त के जीवन में प्रार्थना के महत्व पर बल दिया। व्रजलीला ने इसे बड़ी गम्भीरता से लिया। मैं उसे अकसर मंदिर में विग्रहों से प्रार्थना करते हुए देखती। किन्तु

वह केवल अपने लिए प्रार्थना न करती - वह अन्य भक्तों के आध्यात्मिक कल्याण के लिए भी प्रार्थना करती थी।

रम्भोरी दासी: 1993 की गर्मियों में व्रजलीला हमारे नोवोरोसिस्क के मंदिर आई।

वह एक अबोध बालक की तरह लग रही थी। अपने रोग के बावजूद वह अन्य भक्तों को किसी भी प्रकार का कष्ट न पहुँचाने का प्रयास करती। हम सभी ने उसकी सहायता करने का भरपूर प्रयास किया, किन्तु वह किसी से भी सेवा नहीं लेना चाहती थी। उसे अन्यों की सेवा करना अच्छा लगता था।

उसे चित्रकारी करना भी बहुत अच्छा लगता था। एक बार उसने हमारी वेदी के लिए बरसाना का एक सुंदर चित्र बनाया। उसने एक चित्र वृन्दावन के छः गोस्वामियों का भी बनाया। उस चित्र में एक मजेदार बात यह थी कि अलावा रघुनाथ दास गोस्वामी के सभी गोस्वामियों के मुख चित्रित कर दिए गए थे। जब मैंने उससे कारण पूछा, उसने जवाब दिया कि उसे रघुनाथ दास गोस्वामी के मनोभाव और चरित्र की समझ नहीं थी। बाद में, जब उसने उनके बारे में चैतन्य चरितामृत में पर्याप्त पढ़ लिया तब ही उसने उनके मुख को चित्रित करने का कार्य समाप्त किया।

रात को, अपने रोग के कारण वह अकसर कराहती थी। कभी-कभी वह बिल्कुल भी सो नहीं पाती थी और बस पूरी रात जाग कर जप करती रहती थी। जब वह हमारे साथ होती तो वो मन्दिर में विग्रहों की पूजा करती और उसका मंगल आरती में नेतृत्व करना बहुत सौम्य और सुन्दर होता।

एक बार उसने मुझे पकड़ने के लिए अपनी जैकेट दी जिसकी एक जेब में उसकी डायरी थी। किसी भी अन्य परिस्थिति में मैं किसी अन्य व्यक्ति की डायरी न पढ़ती, किन्तु उसकी डायरी को पढ़ने से मैं स्वयं को न रोक पाई। उसे पढ़ने के बाद मैं स्तब्ध थी। वह असंतुष्टी व्यक्त कर रही थी कि मृत्यु से पहले बस थोड़ा ही समय रह गया है, किन्तु कृष्ण के लिए वह बस थोड़ी ही सेवा कर पाई है। उसकी डायरी को पढ़ने पर मैं यह देख सकी कि वह कितनी शुद्ध थी और मैं कितनी मैली।

गुरु से दीक्षा प्राप्त करना

अध्याय 3

इन्द्रद्युम्न स्वामी: मैंने मई 1992 में व्रजलीला दासी को अपनी शिष्या स्वीकार किया। यह देखते हुए कि वह एक बहुत निष्ठावान भक्त है जिसके पास जीवन में अधिक दिन शेष नहीं हैं, मैंने उसे केवल कुछ ही महीने बाद ब्राह्मण दीक्षा प्रदान की। छः महीने बाद, गंधर्विका गिरिधारी दासी, मेरी पहली रूसी शिष्या, जो कुछ महीनों से उसकी पूरा समय देखभाल कर रही थी, मेरे पास आई और व्रजलीला के साथ वृन्दावन जाने की आज्ञा माँगने लगी। वह चाहती थी कि व्रजलीला श्रीधाम वृन्दावन में अपना शरीर त्यागे। यह सोचकर कि व्रजलीला के वृन्दावन में रहने से उसे कृष्ण भक्ति में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी, मैंने सहमति दे दी।

वृन्दावन में निवास

अध्याय 4

गंधर्विका गिरिधारी: जब हम नवम्बर 1993 में वृन्दावन पहुँचे, हमने बहुत सारे मन्दिरों का दौरा किया। आरम्भ से ही, व्रजलीला को उन मंदिरों के प्रभारी गोस्वामियों का स्नेह मिला। ऐसा राधा-दामोदर और इमली ताल के मन्दिरों में विशेष रूप से नजर आता था। राधा-दामोदर मंदिर में पहली बार जाने पर, वहाँ के मुख्य गोस्वामी ने हमें प्रसाद लेने के लिए आमंत्रित किया। जब मैंने उन्हें बताया कि व्रजलीला वृन्दावन अपना शरीर त्यागने के लिये आई है, तो यह सुनकर वे बहुत प्रभावित हुए और बोले कि वे प्रतिदिन उसके लिये राधा-दामोदर भगवान् से प्रार्थना करेंगे।

"भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति का सौभाग्य करोड़ों जन्मों के पुण्य कार्यों से भी प्राप्त नहीं की जा सकता। इसे तो केवल तीव्र लालसा से ही प्राप्त किया जा सकता है। यदि यह कहीं पर भी उपलब्ध हो, तो बिना कोई देर किये इसे तुरन्त खरीद लेना चाहिये। (श्रील रूप गोस्वामी पदयावली 14)

इमली ताल के मुख्य गोस्वामी भी उसके प्रति बहुत कृपालु थे। एक बार वह वहाँ किसी दीक्षा समारोह के अवसर पर पहुँची। गोस्वामी जी ने वहाँ सभी लोगों के सामने घोषणा की कि उन्हें उस समय वहाँ सब कुछ बहुत शुभ जान पड़ रहा है क्योंकि इस्कॉन की एक प्रतिनिधि वहाँ पर उपस्थित है।

व्रजलीला अकसर वृन्दावन के मन्दिरों में विग्रहों के दर्शन करने जाती थी। एक बार मैंने सोचा कि उसके पास कोई धन नहीं है फिर भी वह विग्रहों के लिए हमेशा मिठाई और हार लाती है। मैंने उससे पूछा कि तुम्हें इसके लिए पैसे कहाँ से मिलते हैं। उसने उत्तर दिया, "मुझे अकसर मन्दिर जाते हुए सड़क पर पैसे पड़े मिलते हैं। और मैं उनसे भगवान् के लिए भेंट खरीद लेती हूँ।"

वह सदैव किसी भी परिक्रमा पर जाने के लिए तैयार रहती थी, परन्तु उसकी सबसे बड़ी चिन्ता थी उसका अस्वस्थ होना जिसके कारण वह गोवर्धन परिक्रमा नहीं कर सकती थी। जब भी सम्भव होता वह राधा-कुण्ड जाती। वहाँ उसके प्रिय स्थान थे- रघुनाथ दास गोस्वामी की समाधि और भगवान् चैतन्य की भजन कुटीर। इन स्थानों पर वह सदैव प्रार्थनामय भाव में होती। वह नियमित रूप से छः गोस्वामियों की समाधियों पर जाती और उनकी कृपा के लिये प्रार्थना करती। उसे उनके जीवन की कहानियाँ हृदय से कण्ठस्थ थीं।

हमारे कृष्ण- बलराम मंदिर के श्री श्री राधा-श्यामसुन्दर उसके सबसे प्रिय विग्रह थे, और वे उनके समक्ष प्रतिदिन कई घण्टे अपना जाप करने में बिताती थी। उसे रात्री के अंतिम दर्शन बहुत पसंद थे, जब पुजारी विग्रहों के हार वितरित किया करते थे। वह अकसर कहा करती कि विग्रह अन्त में आने वाले दर्शनार्थियों पर

सबसे अधिक कृपालु होते हैं। और जब भी उसे श्री श्री राधा-श्यामसुन्दर, या फिर किन्हीं अन्य विग्रहों से, कोई महाप्रसाद मिलता, वह सदैव उसे दूसरों के साथ बाँटती।

जब हम वृन्दावन आए तो श्रील गुरुदेव ने श्रीपाद भक्तिभृंग गोविन्द महाराज से व्रजलीला के आध्यात्मिक जीवन में सहायता करने के लिये निवेदन किया, अतः वह सदैव भक्तिभृंग महाराज के आदेशों को ऐसे स्वीकार करती मानो वे उसके अपने गुरु महाराज ने दिये हों। उसे गोविंद महाराज से बहुत लगाव था और वह उनकी देखभाल और आध्यात्मिक मार्गदर्शन की बहुत सराहना किया करती थी। गुजरने से कई महीने पहले, गोविंद महाराज ने उसे एक बड़ी सुन्दर गोवर्धन-शिला दी थी। वे उसे लेने के लिये स्वयं गोवर्धन पर्वत गये और उस शिला के पूजन के लिये चाँदी का सभी सामान लाए।

व्रजलीला एक गुणवान चित्रकार थी। हमारे वृन्दावन पहुँचने पर, उसे पार्वती दासी ने श्रीकृष्ण की लीलाओं पर रचित बच्चों की एक पुस्तक के लिए चित्रकारी करने के लिए नियुक्त कर दिया। पार्वती ने व्रजलीला से एक चित्र बनाने का अनुरोध किया जिसमें प्रातःकाल द्वारका में श्रीकृष्ण उठ रहें हैं और रुक्मिणीदेवी उनके बराबर में उपस्थित हैं। व्रजलीला ने यह चित्र बनाना आरम्भ किया, परन्तु कभी पूरा न कर सकी।

कभी-कभी मैं उससे नाराज हो जाती। वह अकसर अपनी निजी आवश्यकताओं को अनदेखा किया करती और एक बच्चे की तरह अपने वरिष्ठजनों पर निर्भर रहती। मुझे उसे सब कुछ उपलब्ध कराना पड़ता- उसके रहने के लिये स्थान, उसके खाने के लिये भोजन, उसके चित्र बनाने का सामान और उसके कपड़े। मैं कभी-कभी सोचती कि आखिर उसका ध्यान कहाँ है, परन्तु वास्तव में मैं जानती थी कि उसका ध्यान तो केवल भक्तिमय विषयों से भरा हुआ था। कृष्णभावना में प्रगति करने के लिए वह सच्चे मन से प्रयासरत थी तथा इस संदर्भ में उसके अनगिनत प्रश्न मुझे आश्चर्य में डाल देते थे।

एक सुबह उसने मुझे अपना एक हास्यपूर्ण स्वप्न बताया जो उसे एक रात पहले आया था। मेरे लिये यह इस बात का संकेत था कि वह श्री वृन्दावन-धाम के बारे में सदैव कितना अधिक सोचती रहती थी। उसको यह स्वप्न आया कि उसने वृन्दावन में तीन बार जन्म लिया है। पहला एक गधे के रूप में। उसने बताया कि वह कैसे एक गधे की भाँति वृन्दावन की मिट्टी में इधर-उधर घास के गुच्छे खोजती रहती थी। एक बार उसने कोई खराब घास खा ली और मर गई। उसके स्वप्न में उसका अगला जन्म एक पिल्ले का था। उसने स्वयं को उस पावन धाम की सड़कों पर इधर-उधर तब तक भटकते हुए देखा जब तक वह एक रिक्शा द्वारा कुचली नहीं गई। जब उसने वह शरीर छोड़ा तब उसने एक गाय के रूप में जन्म लिया और वृज में यहाँ-वहाँ भटकती रही। जब वह गोवर्धन पर्वत पर आई वह उस पवित्र पर्वत पर यह सोचकर नहीं चढ़ी कि वह भगवान् कृष्ण को बहुत प्रिय है। फिर उसने अपने गाय के शरीर में गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा शुरू कर दी। परिक्रमा के बीच में उसने वह शरीर त्याग दिया। मैंने उससे पूछा, "फिर तुमने कौन सा जन्म लिया?" वह बस हँसी और बोली, "वह उस स्वप्न का अन्त था।"

अपने गुरु से निकटता के लिये प्रार्थना

अध्याय 5

वृन्दावन में रहते हुए वह सदैव अपने गुरुदेव के साथ अपने संबंध अधिक गहरे करने की इच्छा व्यक्त करती थी। वह प्रायः मेरे सौभाग्य की प्रशंसा किया करती थी, कि उसे तो उनसे केवल एक ही पत्र प्राप्त हुआ है और मुझे कई। उसने कहा कि उसकी उनमें श्रृद्धा के अभाव के कारण उन्होंने उसको व्यक्तिगत रूप से कभी कोई पत्र नहीं लिखे। परन्तु मैं उसको सदैव स्मरण कराती रही कि गुरु महाराज ने उसे इतना शीघ्र पहली और दूसरी दीक्षा दी और साथ ही साथ श्रीवृन्दावन धाम आ जाने का निर्देश भी दिया। इस प्रकार उसे भी उनकी विशेष कृपा प्रदान हुई है।
मई 1994 में, जब वृन्दावन में श्रील गुरुदेव के शिष्य उनकी व्यास-पूजा मना रहे थे, उसने अपनी मर्मस्पर्शी श्रद्धांजलि से सबके हृदय को छू लिया:

प्रिय श्रील गुरुदेव,

मैं आपके पावन चरणकमलों में बड़े आदर और श्रद्धा के साथ प्रणाम करती हूँ। आपकी सदा जय हो। आपने सदैव अपनी कृपा से मुझे आश्रय दिया। इस वर्ष, मुझे वृन्दावन आने की अनुमति देकर, आपने मुझे पावन धाम, श्रील प्रभुपाद, और भगवान् कृष्ण की स्तुति करने का अवसर प्रदान किया। यहाँ पर मैं कई उत्कृष्ट वैष्णवों से मिली जो श्रील प्रभुपाद की शिक्षाओं के प्रति समर्पित हैं। मैं भक्ति में उनका अनुसरण करने का प्रयास कर रही हूँ। हाल ही में, हमने श्रील प्रभुपाद का तिरोभाव दिवस मनाया। उस दिन मैं उनके शिष्यों के उदार हृदयों को देख सकी; मैंने अनुभव किया कि श्रील प्रभुपाद सदैव हमारे बीच उपस्थित हैं। उस उत्सव में हम, उनके शिष्यों के शिष्य, जिन्हें कभी उनसे मिलने का अवसर नहीं प्राप्त हुआ, श्रील प्रभुपाद से मिल सके। उस दिन मैं आपका स्मरण कर रही थी, मेरे गुरूदेव, जिसने अपना पूरा जीवन श्रील प्रभुपाद को समर्पित कर दिया है। जब कोई आचार्य प्रस्थान करता है, तो जो शिष्य निर्बल होते हैं पथभ्रष्ट हो जाते हैं। किन्तु जो दृढ होते हैं वे पहले से भी और अधिक उनके निर्देशों का पालन करने की प्रतिज्ञा करते हैं। मुझे आपके शब्द याद हैं, "मैं प्रार्थना करता हूँ कि हमें श्रील प्रभुपाद का आशीर्वाद प्राप्त हो ताकि हम उनके मिशन का विश्वभर में प्रचार कर सकें।"

आपको यह आशीर्वाद प्राप्त है और इसलिये आप उनसे कभी भी अलग नहीं होते हैं। आप जहाँ भी होते हैं, हर समय उनकी सेवा में लगे रहते हैं। आप उनके सेवक हैं जिसने अपना हृदय पूर्ण रूप से उनको समर्पित कर दिया है। आपके पद से अधिक यशस्वी और कोई पद नहीं है। उस दिन मैंने श्रील प्रभुपाद से प्रार्थना की कि मुझमें भी उनकी शिक्षाओं के प्रति ऐसा ही दृढ़ विश्वास प्राप्त हो जैसा कि आपको प्राप्त है। मैं सदैव आपके निर्देशों को अपने जीवन का परम लक्ष्य बनाने का प्रयास करूँगी। मैं सदैव उन क्षणों के बारे में सोचकर प्रेरित होती हूँ जब मुझे आपकी व्यक्तिगत रूप से सेवा के द्वारा आपका प्रत्यक्ष संग पाने का अवसर मिलेगा।

तब मैं कभी भी आपसे अलग नहीं होऊँगी। यहाँ तक कि मृत्यु का भयंकर विचार भी हमारे बीच की डोर को नहीं काट पाएगा।

प्रिय गुरुदेव, मैं आपसे भीख माँगती हूँ, कि मुझे आप अपने उत्तम शिष्यों के गुणों को प्रदान करने का आशीर्वाद दें जो पूर्ण शुद्धता से आपकी सेवा में संलग्न हैं। मुझे विनम्रता का आशीर्वाद दें जिससे पावन नाम मेरे हृदय के भीतर प्रकट हों।
अभी मैं वांछित लक्ष्य के आधे मार्ग तक भी नहीं पहुँच पाई हूँ और आगे का मार्ग बहुत कठिन है। आज के दिन मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ, कृपया मुझे काम, लोभ और ईर्ष्या और उन सब बातों से मुक्ति प्रदान करें जो मुझे आपकी सेवा करने से पृथक करती हैं। आप मेरे जीवन में प्रकाश देने के लिये आये, और मुझे दिव्य प्रेम से बंदी बना लिया। मैं आपकी सदैव ऋणी रहूँगी, मेरे परम प्रिय, शाश्वत पिता, श्रील गुरुदेव।

आपकी नित्य सेविका
व्रजलीला दासी
(वृन्दावन)

भागवतम् कक्षा में, उसने सुना था कि वृन्दावन-धाम गुरु की कृपा के लिये प्रार्थना करने का एक बहुत विशेष स्थान है क्योंकि आदि गुरु, भगवान् बलराम, वृन्दावन में ही निवास करते हैं। उस दिन मैंने उसे भगवान् बलराम से अपने गुरुदेव के प्रति अपनी आसक्ति बढ़ाने के लिये बड़ी निष्ठा से प्रार्थना करते हुए सुना।

12 सितम्बर, राधा अष्टमी के दिन, उसे राधा-कुण्ड और वरसाना की परिक्रमाओं पर जाने का अवसर मिला। वह उन पवित्र स्थानों पर प्रार्थना कर पाने के कारण अत्यन्त प्रसन्न थी। परन्तु पिछले दिन ऊँचोगाँव में सक्रियता अधिक होने के कारण वह थक गई थी और कमजोरी अनुभव कर रही थी, और वरसाना की पहाड़ी पर चढ़ाई करने के लिये उसे दूसरी महिलाओं के सहारे की आवश्यकता पड़ी। वे लाड़ली लाल मन्दिर (वरसाना का मुख्य मंदिर) उसी क्षण पहुँचे जब राधारानी का उत्सव शुरु हो रहा था। वहाँ पर काफी भीड़ थी। व्रजलीला विग्रहों के निकट जैसे-तैसे पहुँच गई, और जैसे ही वह पहुँची वहाँ के पुजारी महाप्रसाद की एक बड़ी थाली के साथ बाहर आये। उन्होंने उसको पहला भाग दिया, और वह तुरन्त ही कृपा पाने के लिये आतुर सैकड़ों वृजवासियों से घिर गई। वह किसी तरह से वहाँ से निकल पाई और बड़े आनन्द के साथ उसने परिक्रमा पर आए भक्तों को जो कुछ भी बचा था बाँटा। दुर्भाग्यवश, उसके थके होने के कारण, वह तभी मंदिर में मूर्छित हो गई, और महिलाओं को उसे बस तक पहुँचाना पड़ा।

अगले दिन, बिना मेरी जानकारी के (हालांकि मैंने उसे बिस्तर में आराम करने के सख्त आदेश दे रखे थे) वह गोपाल कृष्ण गोस्वामी महाराज के रूसी शिष्यों को वृन्दावन में मुख्य मन्दिरों की परिक्रमा कराने के लिये ले गई। मैं इस बात के लिए उसपर क्रोधित हुई और बाद में मैंने उसे डाँटा। किन्तु मैंने अहसास किया कि व्रजलीला कभी भी परिक्रमा पर जाने का अवसर खोना नहीं चाहती थी। वह भक्तों को परिक्रमा पर ले जाने के लिये उचित पात्र थी, क्योंकि, जैसा मैंने पहले कहा, उसे धाम में पावन स्थानों की कई लीलाएँ पता थीं।

अत्यंत गम्भीर स्थिति

अध्याय 6

अगली सुबह श्रीमद्भागवतम् की कक्षा के बाद मैं अपनी धर्मशाला पर वापस लौट आई। अपना स्वास्थ खराब होने के कारण व्रज लीला अकसर सुबह 7:00 बजे तब सोती थी। जब मैं हमारे कमरे में दाखिल हुई तो मैंने देखा कि वह अत्यन्त दर्द में थी। उसने मुझे बताया कि उसे एक नंगे तार से बिजली का झटका लगा है और उसे छाती में दर्द महसूस हो रहा है। मैं उसे तुरंत सरत हस्पताल ले गई लेकिन वहाँ के डाक्टरों ने कहा कि मुझे उसे मथुरा ले जाना चाहिए। मथुरा के हस्पताल में उन्होंने उसे कई दिनो तक निगरानी में रखा। जब वे उसकी छाती का दर्द जाँच रहे थे तब वे सभी डाक्टर अधिक चिंतित हो गए जब उन्होंने पाया कि कैंसर का संकट गहरा होता जा रहा है। मैं उसे आराम करने के लिए हमारे वृन्दावन की धर्मशाला में वापस ले आई। कुछ दिनों बाद मैंने मथुरा में उसके कैंसर के संकट के बारे में डाक्टरों से दोबारा परामर्श किया। वे कीमोथेरेपी शुरू करना चाहते थे लेकिन मुझे गोपनीय रूप से साफतौर पर बता दिया था कि यह उसका जीवन सिर्फ कुछ महीनों तक ही बढ़ा पाएगा।

मैंने मंदिर में कुछ वरिष्ठ महिलाओं से बात करी और उन सभी ने सुझाव दिया कि उसे वह इलाज नहीं कराना चाहिए। फिर मैंने व्रजलीला से बात करी और कहा कि मेरी राय में उसे वापस हस्पताल चले जाना चाहिए और इलाज कराना चाहिए क्योंकि उसकी स्थिति नाजुक है। उसने उत्तर दिया, “सबसे नाजुक स्थिति भगवान् के भक्तों के संग के बिना होगी। मैं स्वयं के लिए कोई खतरा नहीं देखती यदि मैं वृन्दावन में भक्तों का संग करते हुए मरती हूँ। यहाँ उपस्थित वरिष्ठ भक्त मुझे मत्यु के समय भगवान् में ध्यान लगाने में सहायता करेंगे। मुझे इस सहायता की आवश्यकता है। यह किसी भी कीमोथेरेपी से, जिस पर मुझे जरा भी विश्वास नहीं है, कहीं अधिक प्रभावशाली होगा।”

मुझे उसके विचार से सहानुभूती थी लेकिन चूंकि श्रील गुरूदेव ने मुझे उसकी जिम्मेदारी सौंपी थी, मैंने अपनी गुरुबहन मानसी गंगा से आग्रह किया कि वह गुरु महाराज को फैक्स करे और उनसे पूछे कि हमें आगे क्या करना चाहिए। अगले दिन गुरुदेव ने फैक्स किया जिसमं उन्होंने लिखा कि उन्होंने व्रजलीला से पिछले साल रूस में कीमोथेरेपी के विकल्प पर चर्चा करी थी। उस समय उन्होंने इसे न लेने का निर्णय लिया था। उन्होंने उसे हर सम्भव प्राकृतिक उपचार प्रयोग करने के लिए उत्साहित किया था लेकिन यदि सब कुछ नाकाम हो जाए तो उन्होंने उसे आपना शरीर श्री वृन्दावन धाम मे त्याग देने का निर्देश दिया था। श्रील गुरूदेव का जवाब सुनते ही व्रजलीला ने गम्भीरता से अपने आप को मृत्यु के क्षण के लिए तैयार करना शुरू कर दिया।

“मैं पुनरावर्ती जन्म और मृत्यु के दर्दनाक, अथाह भंवर में डूब रहा हूँ। हे भगवान्, हे आश्रयहीनों के बंधु, हे दया के दीप्तिमान चन्द्रमा, कृपया, केवल एक बार, शीघ्र ही अपने हाथ मुझे बचाने के लिए फैलाइए।

(श्रील रूप गोस्वामी पदयावली)

अपने गुरुदेव के लिये एक संदेश

अध्याय 7

दिन प्रतिदिन हम देख रहे थे कि उसकी हालत और बिगड़ रही थी। क्योंकि अन्त करीब आ रहा था, हमने श्रील गुरुदेव को सूचित करने का निश्चय किया कि उसके बचने की आशा बहुत कम है और उनसे निवेदन है कि वे वृन्दावन आ जाएँ। 5 अक्तुबर को मानसी गंगा ने श्रील गुरुदेव को फोन किया। समाचार सुनकर, गुरुदेव ने कहा कि उनको सोचने के लिये थोड़ा समय चाहिये यह समझने के लिए कि वे अपने पोलैण्ड के प्रचार कार्य से कैसे समय निकाल सकते हैं। उन्होंने पूछा कि क्या व्रजलीला उन्हें कोई व्यक्तिगत संदेश देना चाहती है और कहा कि हम उन्हें ब्रजलीला का संदेश पहुँचाने में सहायता करें। जब मैंने उसको यह बताया तो वह कुछ क्षण के लिये शांत रही और फिर उसने अपने प्रिय गुरुदेव के लिये यह संदेश बोलकर लिखवाया।

मेरे अत्यंत प्रिय गुरुदेव,

मैं आपके चरणकमलों में प्रणाम करती हूँ। आपकी सदा जय हो।

मेरे हाथों से सब कुछ निकला जा रहा है। हर तरह की आशा जो मेरे पास थी समाप्त हो रही है। परन्तु मैं आध्यात्मिक जीवन में अभी भी एक बच्ची ही हूँ। मैं कामना करती हूँ काश मेरे हृदय में थोड़ा प्रेम या आध्यात्मिक भाव हो। परन्तु मुझे आप में दृढ़ विश्वास है। मैं इस विश्वास के कारण प्रसन्न हूँ और मैं इसे एक बहुमूल्य खजाने की तरह सम्भाल कर रखूँगी। इससे मुझे एक अन्य प्रकार का विश्वास प्राप्त होता है कि मैं आध्यात्मिक जगत लौट जाऊँगी और श्री श्री राधा-श्यामसुन्दर के चरणकमलों की सेवा प्राप्त कर सकूँगी। और इस प्रकार का विश्वास ही सही मायने में सच्चा विश्वास है कि एक आध्यात्मिक जगत है और बस द्वार के दूसरी ओर मेरी प्रतीक्षा कर रहा है।

मै आपकी बहुत-बहुत आभारी हूँ कि आप मेरा आध्यात्मिक जीवन में मार्गदर्शन कर रहे हैं, हालांकि मैं आपसे बहुत दूरी अनुभव करती हूँ।

आपकी सेविका

व्रजलीला दासी

यह संदेश मिलने के पश्चात, श्रील गुरुदेव ने कहा कि वह आने का हरसंभव प्रयास करेंगे। यह सुनकर व्रजलीला बहुत प्रसन्न हुई, और कहने लगी कि उसने कभी भी उनसे इस प्रकार की कृपा पाने की आशा नहीं की थी। उसने कहा कि अर्चा विग्रह माताजी, जिनका हाल ही में देहान्त हुआ था, अत्यधिक भाग्यशाली थीं कि उनके गुरु महाराज, गिरिराज स्वामी, उनके अंतिम क्षणों में उनके पास उपस्थित थे। अब उसे लगने लगा था कि सम्भवतः ऐसा सौभाग्य उसे भी प्राप्त हो सकता है। परन्तु श्रील गुरुदेव ने अपने संदेश में सम्भावना व्यक्त करते हुए कहा था कि, "मैं आ सकता हूँ", और उसे यह आभास होने लगा था कि व्रज में कुछ भी इतना

सस्ता नहीं है, अतः उसने अपना देह त्यागने से पूर्व अपने गुरु महाराज से मिलने का अवसर प्राप्त करने के लिये अत्यंत तीव्रता से प्रार्थना करनी आरम्भ कर दी।

गुरुदेव का एक संदेश

अध्याय 8

जैसे-जैसे दिन गुजरते गए उसकी स्थिति और खराब होती गई। उसे दिखना बंद होने लगा और वह सिर्फ अपनी आँखों के ठीक सामने वाली वस्तुएँ ही देख पा रही थी। वह महामंत्र का जाप करने के लिए बड़ी इच्छुक थी लेकिन अपनी कमजोर अवाज के कारण उसे जाप करने में बहुत कठिनाई हो रही थी। इसलिए उसने मुझे अपने कान में जाप करने के लिए कहा और वह स्वयं अपनी ऊँगलियों से माला के मनकों को आगे खिसकाने लगी। मानसी गंगा ने 9 अक्तुबर को फिर से श्रील गुरुदेव को फोन किया यह बताने के लिए कि व्रजलीला के पास अब अधिक समय नहीं है। अगले दिन हमें श्रील गुरुदेव का फैक्स मिला जिसमें उन्होंने उसे अपना अंतिम निर्देश दिया:

"भगवान् कृष्ण, जो अंधकार में उगते सूर्य के समान हैं, किसी डूबते हुए के लिए एक नाँव के समान हैं, प्यास से मरने वालों के लिए मधुर वर्षा के बादल के समान हैं, निर्धन के लिए अपार धन के समान हैं, और अत्यंत दर्दनाक रोग से पीड़ित रोगी के लिए एक अचूक चिकित्सक के समान हैं, हमें धन्य करने के लिए आए हैं।"

(श्री व्यासदेव द्वारा पदयावली से उद्धृत)

रोक्लॉ, पोलैण्ड

अक्तूबर 10, 1994

मेरी प्रिय व्रजलीला,

तुम्हें मेरा आशीर्वाद। श्रील प्रभुपाद की जय हो।

मुझे अभी-अभी मानसी गंगा से सूचना मिली है कि वृन्दावन में डाक्टरों के अनुसार तुम शीघ्र ही अपना शरीर त्यागने वाली हो। मैं प्रार्थना कर रहा हूँ कि तुम वापस भगवद्धाम चली जाओ, क्योंकि तुमने अपने इस जीवन में भगवान् की बहुत अच्छी सेवा करी है।

अब इन अंतिम क्षणों में, कृपया अपना मन भगवान् की शाश्वत लीलाओं में लगाओ। भगवान् से प्रार्थना करो कि शुद्ध भक्ति प्राप्त करने के लिए तुम्हारे हृदय में शेष किसी भी बाधा को हटा लें और उनसे निवेदन करो कि तुम्हें उनके चरणकमलों की शाश्वत सेवा का सौभाग्य प्राप्त हो। वे तुम्हारी प्रार्थनाओं का उत्तर अवश्य देंगे, क्योंकि वे ही तुम्हें अपनी कृपा से जीवन के तुम्हारे अंतिम दिनों में श्रीवृन्दावन धाम लाए हैं, जहाँ उन्होंने तुम्हें उनके कई स्नेही भक्तों का आश्रय प्रदान कराया है।

मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि मैं अब हर मिनट तुम्हारे बारे में ही सोच रहा हूँ, यहाँ तक कि अपने व्यस्त कार्यक्रम के बीच में भी। अपना शरीर त्यागने की इस अन्तिम परीक्षा की घड़ी में, मैं निरंतर श्रील प्रभुपाद से तुम्हारा ध्यान रखने के लिए और मार्गदर्शन करने के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। उनकी कृपा से हम जीवन की इस सबसे कठिन घड़ी को पार कर सकते हैं। तुम मेरी बहुत प्रिय आध्यात्मिक पुत्री हो और तुम्हारा वियोग मेरे लिए असहनीय होगा। लेकिन ये निश्चित जान लो कि गुरु और शिष्य एक पल के लिए भी अलग

नहीं होते हैं क्योंकि उनका यह सम्बंध शाश्वत है। एक दिन हम सभी - इस्कॉन के सभी सदस्य- फिर से आध्यात्मिक जगत में एक साथ होंगे, श्रील प्रभुपाद के चरणकमलों में सुरक्षित। श्रील प्रभुपाद ने एक बार कहा था कि आध्यात्मिक आकाश में हमारा एक इस्कॉन अलग से होगा।

मेरी प्रार्थना है कि श्रीकृष्ण शीघ्र ही तुम्हें अपने चरणकमलों की छत्रछाया में ले लें और तुम्हें शाश्वत रूप से अपनी सेवाओं में लगा लें। व्रजलीला, मेरा आशीर्वाद सदैव तुम्हारे साथ है। मैं निकट भविष्य में तुम्हें फिर से मिलने की आशा करता हूँ।

सदैव तुम्हारा शुभचिंतक।

इंद्रद्युम्न स्वामी।

फैक्स के शब्दों से हम समझ गए थे कि श्रील गुरुदेव नहीं आ रहे हैं। हमें व्रजलीला के सामने उस फैक्स को पढ़ने में संकोच हुआ। उस शाम तमाल कृष्ण महाराज, गिरिराज महाराज और दूसरे भक्त वहाँ आए और व्रजलीला के कमरे में सुंदर कीर्तन किया। लेकिन व्रजलीला उत्सुकता से चारों तरफ देख रही थी और जानना चाहती थी कि उसके गुरु महाराज आ रहे हैं या नहीं। उसने कहा कि सुन्दर कीर्तन होने के बावजूद भी वह शांति का अनुभव नहीं कर पा रही थी। मैंने उसे सच्चाई बताने का निश्चय किया, इस उम्मीद में कि वह उन वैष्णवों की उपस्थिति में शांति का अनुभव करेगी और अपनी अंतिम परीक्षा से पहले अपने गुरु महाराज से मिलने का विचार त्याग देगी। अतः मैं आगे झुकी और उसे बताया कि श्रील गुरुदेव ने एक संदेश भेजा है: उनकी पोलैण्ड में कई जिम्मदारियाँ हैं और उनका आना मुमकिन नहीं है। मैंने उसे गुरु महाराज के गुरुभाईयों को उनके प्रतिनिधि के रूप में देखने के लिए कहा जो उसकी मदद करने आए हैं।

मुझे उनका मार्गदर्शन चाहिए।

अध्याय 9

वह कुछ क्षण के लिये शांत रही और फिर उसने कहा। "मैं अन्य गुरुओं का अत्यधिक आदर करती हूँ तथा उनके निर्देशों में मुझे पूरा विश्वास है। उन्होंने मेरे आध्यात्मिक जीवन में मेरी बहुत सहायता की है, और मुझे कोई संदेह नहीं कि वे मेरी अब भी सहायता कर सकते हैं। परन्तु मैं अपने गुरु महाराज के अन्तिम निर्देशों को व्यक्तिगत रूप से सुनना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ कि वे यहाँ आकर हर पग पर मेरा मार्गदर्शन करें। शरीर छोड़ने से पहले मुझे उनसे बहुत कुछ पूछना है। मुझे उनका मार्गदर्शन चाहिए। अन्यथा मेरे सम्पूर्ण भक्तिमय जीवन में जो आसक्ति मैंने उनके प्रति विकसित करी है, मैं उसका पूरा लाभ कैसे ले सकूँगी। वे ही मेरे लिए सबकुछ हैं और उनसे बेहतर मुझे कोई नहीं जानता है।" फिर वह फूट-फूटकर रोने लगी।

उसके पलंग के चारों ओर कई वरिष्ठ महिलाएँ उपस्थित थीं, और उन्होंने उसे समझाने का प्रयास किया। मैंने भी उसे समझाने का प्रयास किया, परन्तु कोई भी उसे नहीं समझा पाया कि वह अपने गुरु महाराज के अंतिम प्रोत्साहन के बिना अपना शरीर छोड़ सकती है। फिर सब भक्तगण चले गये, और वह पूरी रात प्रातः सात बजे तक रोती रही।

प्रातः जब मैं उसके बिस्तर के पास पहुँची तो मैंने उससे पूछा, "क्या मैँ तुम्हारे लिये गुरुवाष्टक प्रार्थना गा सकती हूँ?" उसने उत्तर दिया, "हाँ।" मैंने गाना शुरु किया, परन्तु उसे मेरी धुन और मेरा भाव पसन्द नहीं आया, और फिर उसने स्वयं ही गाना आरम्भ किया, बहुत ही कमज़ोर परन्तु बड़े ही मधुर स्वर में। उसने बिना रुके शुरु से लेकर अंत तक गाया, और गाते-गाते उसके लगभग अंधे हो चुके नेत्रों से अश्रुधारा बह रही थी। उसे अपने गुरु महाराज से बहुत लगाव था।

अगले दिन डाक्टर ने हमें बता दिया कि सम्भवतः वह उस दिन जीवित न रहे। श्रीकृष्ण की कृपा से और मेरी गुरुबहन वैष्णवी दासी की सहायता से, उस दिन हम गुरु महाराज से सम्पर्क करने में सफल हो सके और मैंने उनसे आने के लिये विनती करी। मैं पूरी तरह हताश हो चुकी थी और फोन पर रोने लगी। मैंने उनकी कृपा के लिए याचना की। तब उन्होंने उत्तर दिया, "मैं वहाँ पर जल्द-से-जल्द पहुँचता हूँ। व्रजलीला को बता दो कि मैं आ रहा हूँ।"

मैं व्रज के कमरे की तरफ दौड़ी और उसे यह शुभ समाचार सुनाया। वह बहुत प्रसन्न हुई। मैंने उसे कहा कि उसे दो दिन और जीवित रहना होगा जब तक श्रील गुरुदेव न आ जाएँ। मैंने उससे कहा, "श्रीकृष्ण से प्रार्थना करो कि वे उसे जीवित रहने के लिये कुछ और घण्टे प्रदान करें जिससे तुम अपने गुरु महाराज से मिल सको। उन्होंने आने का वचन दिया है।" कई भक्त ऐसा मानते हैं कि व्रजलीला मात्र अपने गुरुदेव से मिलने के लिये ही अगले कुछ और दिनों तक जीवित रही। उसने अपना शरीर त्यागने से पहले तक उनकी प्रतीक्षा की।

परिस्थितियों ने एक भयंकर मोड़ लिया

अध्याय 10

उस शाम परिस्थितियों ने एक भयंकर मोड़ लिया। उसे साँस लेने के लिये संघर्ष करना पड़ रहा था। डाक्टर ने उसे आक्सीजन देने के लिए कहा। परन्तु आक्सीजन की बोतलों का मिलना कठिन हो रहा था। दुर्गा पूजा के उत्सव के कारण अधिकतर दुकानें बन्द थीं। किसी तरह, श्रीकृष्ण की कृपा से, एक घण्टे के पश्चात एक भक्त आक्सीजन की एक बोतल लेकर आया, और वह कई दिनों बाद शांति से सो सकी।

वह बोतल अगले दिन शाम 5 बजे समाप्त हो गई। सौभाग्यवश, किसी अन्य व्यक्ति को आगरा से दो बोतलें और प्राप्त हुईं, और फिर हमने उन नई बोतलों में से एक को पुरानी वाली से बदल दिया। परन्तु दूसरी बोतल एक भक्त गलती से यह सोचकर ले गया कि वह इस्तेमाल करी हुई पहली वाली बोतल है।   अतः व्रजलीला द्वारा प्रयोग में लाई जा रही बोतल जब रात 11 बजे समाप्त हो गई, तब यह देखकर हम बहुत डर गए कि रखी हुई दूसरी बोतल भी खाली है। हम जानते थे कि अगर वह उस रात्री जीवित बची तो वह केवल उसकी गुरुदेव से मिलने की तीव्र इच्छा के कारण होगा। मैंने पूरी रात्री उसको पंखा झलने और उसके कानों में यह बोलने में बिताया, "व्रज, अब गुरुदेव के पहुँचने में केवल बत्तीस घण्टे शेष हैं.... तीस घण्टे शेष हैं ...... पच्चीस घण्टे शेष हैं।"

अगले दिन (12 अक्तूबर) को प्रातः 11 बजे, एक आक्सीजन की पूरी बोतल पहुँच गई। उस रोज वह पूरे दिन और पूरी रात सो सकी, हालांकि वह दर्द के कारण अक्सर चीखती हुई उठ जाती थी। मैंने दरवाज़े पर एक सूचना पत्र यह लिखकर लटका दिया कि उसे परेशान न किया जाए जिससे कि वह गुरु महाराज के साथ अंतिम मुलाकात करने से पहले विश्राम कर सके।

हमें आशा थी कि श्रील गुरुदेव 13 अक्तूबर प्रातः 5 बजे तक पहुँच जाएँगे, इसलिए उस दिन सुबह मैं उसके बिस्तर के पास बैठकर उसके कान में बोलने लगी.... पाँच घण्टे शेष हैं...... तीन घण्टे शेष हैं... दो घण्टे शेष हैं। जब गुरु महाराज अंततः प्रातः 7 बजे कमरे में पहुँचे, मुझे ऐसा लगा जैसे पूरे विश्व का भार मेरे कँधो पर से हट गया हो।

वारसॉ से दिल्ली तक

अध्याय 11

इन्द्रद्युम्न स्वामीः जब मुझे यह दिखाई देने लगा कि व्रजलीला मुझसे मिलने के लिए कितनी उत्सुक है, मैंने जितना शीघ्र हो सकता था वारसॉ से दिल्ली जाने वाली उड़ान के लिए टिकट का प्रबंध किया। जब मैं दिल्ली पहुँचा तो वृन्दावन से भक्तगण मुझे लेने के लिये पहुँचे हुए थे, और हम सीधे ही वृन्दावन के लिये चल पड़े। उस समय मुझे ऐसा लग रहा था कि सम्भवतः मेरे वृन्दावन पहुँचने तक व्रजलीला जीवित न बचे, और मैं श्रीकृष्ण से प्रार्थना करता रहा कि कृपया उसे तब तक जीवित रखें जब तक कि मैं उससे मिल न लूँ। वृन्दावन जाते हुए जब हम लगभग आधा सफर तय कर चुके थे, हमें एक भारी ट्रैफिक जाम मिला जिसके कारण हमें दो घण्टे से भी अधिक की देरी हुई। अंततः, हम वृन्दावन और फिर श्रीकृष्ण-बलराम मन्दिर पहुँचे। गाड़ी से उतरकर मैं सीधा ही व्रजलीला के कमरे की ओर दौड़ा। जैसे ही मैंने व्रजलीला के कमरे में प्रवेश किया, वहाँ के गहन आध्यात्मिक वातावरण से मैं दंग रह गया। प्रत्येक वस्तु अत्यधिक साफ और स्वच्छ लग रही थी। वहाँ पर कमरे में अनेक भक्तगण कीर्तन कर रहे थे, और जैसे ही मैंने भीतर प्रवेश किया सबने मेरी ओर पलट कर देखा। उनके चेहरों के भाव में प्रसन्नता और आश्चर्य का मेल था। व्रजलीला की यह अभिलाषा कि मैं वहाँ उससे मिलने कि लिए पहुँचुँ, अब सभी की अभिलाषा बन चुकी थी। मुझे ऐसा लगता है कि जब मैंने कमरे में प्रवेश किया, तो सभी ने यह सोचा होगा कि श्रीकृष्ण ने व्रजलीला की निष्ठावान और हार्दिक प्रार्थनाओं का उत्तर दे दिया है।

मैं तुरन्त उसके निकट पहुँचा और उससे बात करने लगा। उस कमरे में सब शांत हो गए। मैंने धीरे-धीरे, बड़ी सावधानी से हर शब्द का चुनाव करते हुए, उससे बोलना शुरु किया। सिंह रुपिणी दासी ने हमारी वार्तालाप रिकार्ड करी।

"व्रजलीला, मैं तुम्हारा गुरुदेव बोल रहा हूँ। मैं इतनी दूर तुमसे मिलने इसलिए आया हूँ क्योंकि तुम्हारी मुझसे मिलने की बहुत तीव्र इच्छा थी। तुम मुझे श्रीवृन्दावन धाम लेकर आईं इसके लिये मैं तुम्हें धन्यवाद कहना चाहता हूँ। इससे पता चलता है कि कैसे किसी शिष्य का प्रेम गुरु को भी नियंत्रित कर सकता है।

तुम्हारी अंतिम परीक्षा की घड़ी में मैं तुम्हारे साथ रहूँ, इसलिए मैं यहाँ आया हूँ। मैं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ, श्रीकृष्ण के बारे में बोलना चाहता हूँ, और तुम्हारे हृदय में भगवान् के पावन नामों को पहुँचाना चाहता हूँ। हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे, हरे राम , हरे राम, राम राम, हरे हरे।

"अपने गुरु और भगवान् के प्रति तुम्हारी निष्ठावान भक्तिमय सेवा के कारण, श्रीकृष्ण तुम्हें यहाँ श्रीवृन्दावन धाम लेकर आए हैं। अब तुम इतने सारे अद्भुत भक्तों की उपस्थिति में यह संसार शांति से छोड़ सकती हो।

"समस्त सांसारिक वस्तुओं से अनासक्त रहो। इस समय यहाँ उपस्थित वैष्णवों के संग और उनकी प्रार्थनाओं की कृपा प्राप्त करो ताकि तुम वापस आध्यात्मिक जगत जा सको। डरो मत। यहाँ पर हर वस्तु को श्रील प्रभुपाद की कृपा के रूप में देखो। वे तुम्हें अपना आशीर्वाद दे रहे हैं। तुम पूर्ण रूप से अपने भौतिक शरीर और समस्त भौतिक इच्छाओं से अनासक्त हो जाओ।

"मैं अब यहाँ पर तुम्हारे पास हूँ, अतः तुम सुरक्षित हो। हम सब तुम्हारे लिए कीर्तन करेंगे। अपना ध्यान केवल भगवान् के नामों और उनकी लीलाओ पर केन्द्रित करो।

[इस क्षण, मैंने उसके लिए पाँच मिनट हरे कृष्ण महामंत्र का जाप किया और फिर से उसका मार्गदर्शन करना जारी रखा।]

"व्रजलीला, यहीं वृन्दावन में श्रील प्रभुपाद ने भी अपने अंतिम दिन व्यतीत किये थे। उन्होंने हमें दिखाया था कि इस भौतिक शरीर को छोड़ने की अंतिम परीक्षा में कैसे उत्तीर्ण हुआ जाता है।

"जीवात्मा को अपने शरीर से लगाव इसलिए होता है, क्योंकि इसी के द्वारा वह अपनी भौतिक इच्छाओं को तृप्त कर सकता है। परन्तु एक भक्त सदैव प्रयासरत रहता है कि वह अपनी भौतिक इच्छाओं का त्याग करे और अपने गुरु की इच्छाओं को स्वीकार करे।

"मैं तुम्हारी भक्तिमय सेवा से बहुत प्रसन्न हूँ। कई वर्षों से तुम मेरी एक निष्ठावान और समर्पित शिष्या रही हो। अब यहाँ पर भक्तों के संग में तुम अपना ध्यान श्रीकृष्ण की लीलाओं पर केन्द्रित करो और पावन नामों के कीर्तन का श्रवण करो।

"व्रज, अपने शरीर को छोड़ने में डरो नहीं। श्रीकृष्ण तुम्हारी सहायता करेंगे। वे ही तुम्हें इस आंदोलन में लाए हैं। वे ही तुम्हें भक्तों और श्रील प्रभुपाद के संग में लाए हैं। और उन्होंने ही तुम्हें तुम्हारे गुरु से मिलाया है। उन्होंने तुम्हारी न जाने कितनी प्रकार से सहायता की है।

"तुम्हारी समस्त भक्तिमय सेवाएँ इसी एक क्षण की तैयारी के लिए थीं, जिससे तुम अपना शरीर त्यागने के समय श्री श्री राधा और कृष्ण के चरणकमलों का स्मरण कर सको। यहाँ पर सभी वैष्णव तुम्हारी सहायता के लिये हैं, और हम सभी कीर्तन करेंगे, जिससे तुम्हें किसी प्रकार का भय न हो। अपने दर्द पर बिल्कुल ध्यान मत दो, केवल भगवान् के पवित्र नामों को सुनो।"

[उस समय व्रजलीला ने मुझसे अपना पहला शब्द बोला।]

"मुझे वैष्णवों की कृपा की आवश्यकता है।"

मैंने उत्तर दिया, "कई वैष्णव तुम्हारे लिये प्रार्थना कर रहे हैं। उनकी कृपा से तुम सफल हो जाओगी। तुम्हें भगवान्,गुरु और वैष्णवों की कृपा प्राप्त है।"

भगवान् से प्रार्थना करना

अध्याय 12

इन्द्रद्युम्न स्वामी: दिनभर मैंने उसे उपदेश दिए और कीर्तन की अगुआई की। मैं श्रील प्रभुपाद से तीव्रता से प्रार्थना कर रहा था कि वे मुझे ऐसी कठिन परिस्थितियों में बोलने के लिये उचित शब्द प्रदान करें। मेरे प्रति उसके स्नेहमय लगाव ने मेरे हृदय में भी उसके प्रति प्रगाढ़ स्नेह जागृत कर दिया था। मैं श्रीकृष्ण से दिनभर यह भी प्रार्थना करता रहा कि वे उसपर कृपा करें जिससे वह अपना शरीर पूर्णतः श्रीकृष्ण का स्मरण करते हुए छोड़े। मेरा ध्यान इस बात पर गया कि प्रायः उसके गले में बलगम के अटक जाने से उसका दम घुटने लगता था। जब वह उसे साफ करने में असमर्थ होती तो उसकी आँखे भय के कारण बाहर निकल आतीं। ऐसे में हम उसे थोड़ा ऊपर उठाते जिससे कि उसके गले से बलगम नीचे की ओर जा सके। मैं श्रीकृष्ण से प्रार्थना करता, "कृपया उसे शांति से जाने दें, तथा उसे सक्षम करें कि मृत्यु के क्षण वह उनके चरणकमलों का स्मरण कर सके।"

हालांकि पूरे दिन उसकी स्थिति तेजी से बिगड़ रही थी, मैं उसकी शुद्ध चेतना को देखकर विस्मित था। जब वह सुबह समाप्त होने वाली थी, उसने मुझसे कुछ प्रश्न पूछने की अभिलाषा व्यक्त करी। गंधर्विका गिरिधारी ने अनुवाद करने के लिये, पहले व्रजलीला के मुँह के पास अपना कान लगाकर प्रश्न सुना, और फिर मेरा उत्तर सुनकर उसके कान में तेजी से बोला।

अंतिम प्रश्नोत्तर

अध्याय 13

व्रजलीला: श्रील गुरुदेव, मैं चिंतित हुँ कि यदि मैं पुनः ठीक हो गई, तो मुझे लगेगा कि मैंने आपको यहाँ व्यर्थ ही बुलाया।

इन्द्रद्युम्न स्वामी: तुम तो मुझे श्री वृन्दावन धाम लाई हो। और वृन्दावन की कृपा की आवश्यकता तो प्रत्येक भक्त को होती है।

व्रजलीला: मैं निश्चित होना चाहती हुँ कि मैं भगवद्धाम जा रही हूँ।

इन्द्रद्युम्न स्वामी: तुम कई वर्षों से इसी क्षण के लिये अभ्यास करती रही हो। वे सारी मालाएँ जो तुमने जपीं, वह सारी सेवा जो तुमने की, वह सारा प्रसाद जो तुमने ग्रहण किया, उस सब ने तुम्हें भगवद्धाम जाने के लिये तैयार किया है। इतना सारा अभ्यास जो तुमने अब तक किया है, इसके कारण मृत्यु के समय श्रीकृष्ण को याद रखना तुम्हारे लिये कठिन नहीं होगा। तुम्हें केवल दृढ़ रहना है। तुमने अपने संदेश में मुझसे कहा था कि तम्हें पूरा विश्वास है कि आध्यात्मिक जगत का अस्तित्व है। अगर तुम इन अंतिम कुछ दिनों में श्रीकृष्ण का गम्भीरता से समरण करो, तो तुम उस आध्यात्मिक जगत को जा सकती हो। आध्यात्मिक जगत शाश्वत है, तथा ज्ञान और आनन्द से पूर्ण है। वहाँ पर, हर वार्तालाप गायन है, हर चाल नृत्य है, और वहाँ प्रतिदिन उत्सव होता है।

गोलोक वृन्दावन में श्रीकृष्ण अपने प्रिय भक्तों के संग अपनी दिव्य लीलाओं में व्यस्त होते हैं। वहाँ पर गोवर्धन पर्वत, यमुना नदी और कई अन्य अद्‌भुत स्थान हैं। भगवान् हम सभी को उस आध्यात्मिक जगत में वापस लौटने का निमंत्रण दे रहे हैं। वहाँ पर जाने के लिये तुम्हारा उत्साह ही तुम्हारी योग्यता है।

व्रजलीला: यदि मेरा प्रशिक्षण ठीक से पूरा नहीं हुआ हो तो फिर मैं आध्यात्मिक जगत कैसे जा सकूँगी। [उसका इशारा भगवान् की व्यक्तिगत सेवाओं में अप्रशिक्षित होने को लेकर था]

इन्द्रद्युम्न स्वामी: इस ब्रह्माण्ड में इस समय भी श्रीकृष्ण की लीलाएँ कहीं पर हो रही हैं। जब यहाँ पर एक योग्य भक्त अपना शरीर छोड़ता है, वह उसी स्थान पर जाता है और वहाँ जाकर, भगवान् की सेवा कैसे करनी है, उसका प्रशिक्षण ग्रहण करता है। मैं जानता हूँ तुम इस भौतिक जगत में पुनः वापस नहीं आना चाहती हो, तो तुम्हारे लिए केवल एक ही विकल्प बचता है कि तुम वहाँ जाओ।

व्रजलीला: मुझे नहीं लगता कि मैं कर सकूँगी। मैं योग्य नहीं हूँ।

इन्द्रद्युम्न स्वामी: भगवान् श्रीचैतन्य की कृपा तुम्हारी योग्यता है। इस युग में हम सबका जन्म इतने सारे अभद्र गुणों के साथ हुआ है, परन्तु भगवान् श्रीचैतन्य की कृपा से उन अभद्र गुणों को समाप्त किया जा सकता है। जैसे जगाई और मधाई, उनकी योग्यता यह थी कि उन्होंने भगवान् श्रीचैतन्य के समक्ष समर्पण कर दिया था। बस केवल इतना ही। उन्होंने अपनी बुरी आदतें छोड़ दीं और भक्तिमय सेवा को अपना लिया। तुमने भी यही किया। तुमने अपनी बुरी आदतों को छोड़ दिया और कई वर्षों पूर्व एक भक्त बन गईं। तो तुम भी भगवान् श्रीचैतन्य की कृपा पाने के लिये योग्य हो।

भगवान् श्रीचैतन्य की कृपा से कुछ भी सम्भव हो सकता है। भक्त स्वयं को कभी भी योग्य नहीं समझता। यह तो गुरु और श्रीकृष्ण की कृपा ही है कि हम पुनः आध्यात्मिक जगत लौट पाते हैं। भगवान् प्रत्येक जीवात्मा की इच्छा पूरी करते हैं। अगर कोई भौतिक जीवन की कामना करता है, तो श्रीकृष्ण वह इच्छा पूरी करेंगे। परन्तु यदि कोई सचमुच भक्तिमय सेवा ही चाहता है, तो श्रीकृष्ण अवश्य ही उसकी इच्छा पूरी करेंगे।

व्रजलीला: मैं कृपा के एक सागर से घिरी हुई हूँ। मैं उसका पूर्ण लाभ कैसे प्राप्त करूँ?

इन्द्रद्युम्न स्वामी: अपना ध्यान केवल भगवान् पर केन्द्रित करो। अन्य किसी बात पर ध्यान मत दो। तुम्हारा न कोई अन्य उत्तरदायित्व है, और न ही कोई अन्य बंधन। तुम्हें तो अपने शरीर की देखभाल भी नहीं करनी है, वह तो गंधर्विका कर रही है। तुम्हें श्रीकृष्ण के स्मरण के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं करना है। और यदि तुम्हारे शरीर में कहीं दर्द हो, तो बस अपने मन में चीखकर बोलना, "हरे कृष्ण, हरे कृष्ण।!"

तुम्हारा गुरु होने के कारण मैं तुम से सभी भक्तों के लिये एक अच्छा उदाहरण बनकर दिखाने के लिये कह रहा हूँ। श्रील प्रभुपाद के उदाहरण का अनुगमन करो: मृत्यु के समय श्रीकृष्ण का स्मरण करो और श्रीकृष्ण के पास पुनः लौट जाओ।

व्रजलीला: मुझमें अभी भी कुछ भौतिक इच्छाएँ शेष हैं।

इन्द्रद्युम्न स्वामी: किस प्रकार की इच्छाएँ, व्रजलीला?

व्रजलीला: [शर्माते हुए] कभी-कभी मेरी इच्छा टमाटर खाने की होती है।

इन्द्रद्युम्न स्वामी: [भक्तों की ओर हँसकर देखते हुए] क्या आध्यात्मिक जगत में उनके पास टमाटर हैं? खैर, वहाँ पर कल्पवृक्ष होते हैं, और श्रीकृष्ण की सेवा करने के लिये तुम्हें जिस भी वस्तु की इच्छा हो वह तुम्हें वहाँ मिल जाएगी। अतः मेरा मानना है कि तुम्हें वहाँ टमाटर भी मिल जाएँगे। और यदि इस क्षण तुम्हारी केवल वही एक भौतिक इच्छा शेष रह गई है, तो वास्तव में तुम बहुत सौभाग्यशाली हो।

व्रजलीला: परन्तु यदि मृत्यु के समय मैं श्रीकृष्ण का स्मरण न कर सकूँ तो फिर क्या होगा?

इन्द्रद्युम्न स्वामी: हमसे अधिक श्रीकृष्ण चाहते हैं कि हम पुनः आध्यात्मिक जगत लौटें। उनकी इच्छा हमारी इच्छा से अधिक दृढ़ है। तुम उनकी भक्त हो, और किसी ने भी उनके लिए यदि जरा सी भी भक्तिमय सेवा करी हो, वे उसे बिल्कुल नहीं भूलते। वे तुम्हारे मन की इच्छा जानते हैं।

व्रजलीला: आप मेरा इतना ध्यान कैसे रख पाते हैं?

इन्द्रद्युम्न स्वामी: प्रेम पारस्परिक होता है। जब भक्तों ने श्रील प्रभुपाद के कहा, "सभी आपसे प्रेम करते हैं, प्रभुपाद" तो प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "वह इसलिये क्योंकि मैं भी सभी से प्रेम करता हूँ।" यदि कोई तुम्हें प्रेम करता है, तो तुम स्वतः ही उससे प्रेम करना चाहोगे। यह बात भक्ति में विशेष रूप से बहुत महत्वपूर्ण है। यदि एक साधारण व्यक्ति को अपनी पुत्री से इतना अधिक स्नेह हो सकता है, तो गुरु का अपनी आध्यात्मिक पुत्री के प्रति दिव्य स्नेह का कहना ही क्या?

व्रजलीला: [पुकारते हुए] कृपा! कृपा!

अंतिम घण्टे

अध्याय 14

इन्द्रद्युम्न स्वामी: इन प्रश्नों के पश्चात, उसने पूछा कि क्या वह कुछ देर सो सकती है। मैंने बहुत मंद स्वर में कीर्तन किया, और वह सो गई। तब दोपहर के लगभग 1.30 बजे थे। उस समय अधिकतम भक्त कमरे से चले गए, और वहाँ हम केवल तीन या चार लोग ही बचे थे। दोपहर 2.00 बजे वह जागी और मुझे देखने लगी। उसने ऐसा भाव व्यक्त किया जिससे संकेत मिल रहा था कि उसे मेरे प्रोत्साहन की आवश्यकता है। मैंने अपना सिर इस प्रकार हिलाया जिससे उसे पता चले कि सब कुछ ठीक है। फिर उसने अपना सिर वापस तकिए पर रख लिया, और गंधर्विका गिरिधारी ने उसे एक चम्मच से थोड़ा सा मीठा दूध पिलाने का प्रयास किया। गंधर्विका भौंचक्की सी नजर आई जब वह व्रजलीला के मुँह मे दूध नहीं डाल पाई। व्रजलीला का जबड़ा जाम हो गया था। गंधर्विका ने मेरी ओर देखा और कहा, "श्रील गुरुदेव, यह अच्छा संकेत नहीं है। मुझे लग रहा है कि यह अपना शरीर शीघ्र ही छोड़ने वाली है।"

मैं तुरंत उसकी चारपाई के पास गया और उसके कान में हरे कृष्ण जपने लगा। गंधर्विका उसके दूसरे कान में जप कर रही थी। मानसी गंगा पलंग पर एकदम व्रजलीला के सामने बैठ गई, और गंधर्विका ने उसे राधा-श्यामसुन्दर की दो बड़ी तस्वीरें व्रज के चेहरे के सामने रखने के लिये दीं। जैसे ही मैंने कीर्तन करना आरम्भ किया अन्य भक्तों ने कमरे में आना शुरु कर दिया। अचानक मैंने देखा कि व्रजलीला की साँसे बहुत तेज हो गईं, एक निश्चित संकेत कि मृत्यु अति शीघ्र आने वाली है। कीर्तन और भी अधिक तेज हो गया। मैं उसे प्रोत्साहित करता रहा, व्रज, पावन नामों को सुनो। डरो नहीं। घबराओ नहीं। मै यहाँ हूँ। अपना मन केवल श्रीकृष्ण के चरणकमलों पर केन्द्रित करो। उनके पावन नामों का जाप करो!" तब व्रज ने जाप करना आरम्भ किया। उस भयानक परिस्थिति के कारण वह कभी-कभी बहुत डर जाती, और मैं उसे फिर से पुकारता, "व्रज, हिम्मत मत हारो! पावन नामों का जप करो। प्रभुपाद की जय हो! राधा श्यामसुन्दर की जय हो। हरे कृष्ण!" फिर वह अपना भय भूल जाती और पुनः जाप करना आरम्भ करती। एक समय, गंधर्विका ने पलंग के निकट रखी हुई छोटी सी वेदी तक हाथ बढ़ाया और व्रजलीला की गोवर्धन शिला को उठा लिया। वह ठीक व्रज के चेहरे के सामने भगवान् गिरिराज को पकड़ कर खड़ी हो गयी, और व्रज ने उनकी ओर आँखें चौड़ा कर बड़ी तीव्रता से देखा। वह कभी गोवर्धन शिला की ओर देखती और कभी राधा श्यामसुन्दर की तस्वीरों की ओर देखती। कभी-कभी वह उठती और तस्वीरों को छूती।

डेढ़ घण्टे पश्चात मैं थक गया, परन्तु मुझे पता था कि रुकना सम्भव नहीं है। कीर्तन अत्यधिक तीव्र और गम्भीर हो गया। व्रज की साँसे अभी भी तेज और जल्दी-जल्दी चल रहीं थी। अचानक, हम सभी समझ गए कि अब वह किसी भी क्षण जा सकती है। उस समय कमरे में लगभग पच्चीस भक्त थे और कीर्तन एक आवाज में अपने चरम पर था, "हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण..." किसी ने मुझे राधाकुण्ड के जल की एक बोतल

पकड़ाई, और मैंने उसमें से थोड़ा सा जल उसके माथे पर छिड़का। फिर अचानक, कुछ क्षणों के लिए, व्रजलीला ने साँस लेना बंद कर दिया। मैं महामंत्र का जप करता रहा। राधा श्यामसुन्दर की तस्वीरों की ओर देखते हुए, उसने चार और गहरी साँसे लीं ... और फिर चली गई। उसी क्षण, गंधर्विका मूर्छित हो गयी और जमीन पर गिरते-गिरते उसे एक भक्त ने अपनी बाँहों में पकड़ लिया।

जब हम उसकी नब्ज़ की जाँच कर रहे थे कीर्तन जारी रहा, और फिर मैंने उसकी पलकें बन्द कर दीं। उस क्षण सभी फूट-फूटकर रोने लगे। हम प्रसन्नता के कारण रो रहे थे कि उसने ऐसी शुभ परिस्थितियों में अपना शरीर छोड़ा- परन्तु हम मुख्यतः इस कठोर सच्चाई के कारण रोए कि वह अब हमारे बीच नहीं रही। उस दिन अचानक, हमारे प्रेम और भक्ति की पात्र, व्रजलीला दासी, हम सब को छोड़कर जा चुकी थी।

वियोग की अनुभूति

अध्याय 15

मैंने अन्य पुरुषों के साथ बाहर प्रतीक्षा की जब वरिष्ठ महिलाओं ने व्रजलीला के शरीर को राधा-कुण्ड के जल से स्नान कराया, उसे एक साफ साड़ी पहनाई तथा अंतिम संस्कार के लिए तैयार किया। जब उन्होंने यह कार्य समाप्त कर लिया हम कमरे में वापस आ गए और उसकी मृत देह के निकट कीर्तन करने लगे। ठीक उसी समय, तमाल कृष्ण गोस्वामी और गिरिराज महाराज वहाँ पहुँचे और कमरे में आए। तमाल कृष्ण महाराज ने दिवंगत हुए वैष्णवों के लिये गाई जाने वाली प्रार्थनाओं के गायन में अगुवाई करी। फिर उन्होंने वहाँ पर उपस्थित वरिष्ठ भक्तों से कुछ बोलने के लिये कहा। मैंने उनसे पहले बोलने की प्रार्थना करी। वहाँ व्यक्त की गईं कुछ श्रद्धांजलियों के उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं। ये श्रद्धांजलियाँ तब प्रस्तुत की गईं जब हम व्रजलीला के शरीर को अंतिम संस्कार के लिए यमुना नदी पर ले जाने के लिए आधिकारिक अनुमति की प्रतीक्षा कर रहे थे।

स्मृतियाँ और श्रद्धांजलियाँ

अध्याय 16

श्रीपाद तमाल कृष्ण गोस्वामी

आज मैंने देखा कि एक गुरु को अपने शिष्यों से कितना प्रेम हो सकता है। हालांकि इन्द्रद्युम्न स्वामी हमारी संस्था में प्रचार कार्य करने वालो में सर्वाधिक सक्रिय प्रचारक हैं, फिर भी वे व्रजलीला के अंतिम समय में उसके साथ रहने के लिये यहाँ दो दिन के लिये आए। वास्तव में, आज सुबह जब मैंने व्रजलीला की नर्स कीर्तिदा से पूछताछ की, तो उसने मुझे बताया कि व्रजलीला सम्भवतः एक सप्ताह और जीवित रह पाए। यह सुनकर मैंने कहा कि व्रजलीला जानती है कि उसके गुरु महाराज यहाँ केवल एक या दो दिन के लिये ही हैं, अतः मेरे विचार से जो कुछ भी हुआ वह श्रीकृष्ण की ही व्यवस्था लगती है।

यह लड़की कितनी सौभाग्यशाली और महान है, कि उसकी मृत्यु के समय उसके गुरु महाराज उसके करीब बैठकर, उसे निर्देश दे रहे थे और उसके लिये लगातार जप कर रहे थे! जब हम इस सब के बारे में विचार करते हैं, तब हमें वह कथा याद आती है जिसमें हरिदास ठाकुर ने अपने प्राण त्यागे थे। हरिदास ठाकुर अपने परमप्रिय भगवान्, श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों का दर्शन करते हुए, और उनकी उपस्थिति में ही अपने प्राण त्यागना चाहते थे। आज बिल्कुल वैसे ही यहाँ पर भी हुआ।
इन्द्रद्युम्न महाराज यहाँ पर उसे निर्देश देने और उसके लिये जप करने के लिये आए थे, और फिर बहुत शांति से, उनकी उपस्थिति में, बिना किसी अनावश्यक कष्ट या परेशानी के उसने अपना शरीर त्याग दिया। अब वह हम सबको आशीर्वाद दे सकती है। वह हमारे आशीर्वाद के लिये प्रार्थना कर रही थी, परन्तु मुझे लगता है कि उसकी उपलब्धियाँ और परमधाम में उसकी उपस्थिति उसे अब एक ऐसे पद पर ले गईं हैं जहाँ हम उसके आशीर्वाद के लिए प्रार्थना कर सकते हैं।

हालांकि हम में से कुछ अपने शिष्यों के लिये गुरु हैं, परन्तु ऐसा लगता है कि ये शिष्य हमारे से भी अधिक भाग्यशाली हैं। उन्हें दीक्षा के समय उचित नाम मिलते हैं, और वे अनुकूल परिस्थितियों में अपना शरीर त्यागते हैं। वास्तव में उनमें से अनेक तो बहुत महान हैं।

जब श्रील प्रभुपाद अपना देह त्यागने वाले थे उन्होंने देखा कि हम सभी बहुत दुःखी हैं, परन्तु वे हमें स्मरण कराते रहे कि इसमें शोक करने का कोई कारण नहीं है। चाहे एक वैष्णव इस जगत में आए या इस जगत से चला जाए, यह एक ही बात है, दोनो में कोई अंतर नहीं है। हमें यह समझना चाहिये कि यह लड़की एक महान वैष्णवी है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, वृन्दावन में वह अनेक भक्तों के लिए अत्यधिक प्रिय बन चुकी थी। वृन्दावन के भक्त कोई साधारण भक्त नहीं हैं, किन्तु यदि कोई ऐसे भक्तों के लिए भी अत्यधिक प्रिय बन सकता है, इसका अर्थ यही है कि उसके पास एक बड़ा ही कोमल भक्तिमय हृदय है।

अन्य भक्त भी यहाँ अपने विचार अभिव्यक्त करेंगे, और मैं चाहूँगा कि इंद्रद्युम्न महाराज भी एक बड़े कीर्तन की अगुवाई करें ताकि मैं भगवान् श्रीचैतन्य द्वारा हरिदास ठाकुर की देह को उठाकर पावन नामों का कीर्तन करने वाली लीला का स्मरण कर सकूँ। यहाँ पर स्थिति भी बहुत कुछ वैसी ही है। व्रजलीला के गुरु महाराज एक बहुत अद्‌भुत कीर्तन गायक हैं, और हम सभी को एक ऐसा कीर्तन करना चाहिये जिससे तुरन्त ही हम सभी प्रोत्साहित हों और यह समझ सकें कि ऐसे महान अवसर पर शोक करने योग्य कुछ भी नहीं है। हम सभी दया के पात्र हैं, कम से कम मैं तो, क्योंकि हम अभी भी यहीं इस भौतिक जगत में हैं, अपने सभी अनर्थों के साथ। किन्तु यहाँ हमारे सामने इस लड़की का उदाहरण है जिसने इतनी अनुकूल परिस्थियों में प्रस्थान किया है।

श्रीपाद गिरिराज स्वामी

मेरी व्रजलीला से सबसे पहली मुलाकात तब हुई थी जब वह अर्चा विग्रह दासी से मिलने आयी थी। मैंने देखा कि उनमें एक बड़ा ही मधुर सम्बन्ध था। अर्चा विग्रह के गुजरने के बाद, व्रजलीला मेरे पास कुछ प्रश्न पूछने के लिये फिर आयी थी। उसने जो प्रश्न पूछे वह इतने ऊँचे स्तर के थे और इतने सच्चे हृदय से पूछे गए थे कि मैं जान गया कि वह एक बहुत ही विशेष भक्त है।

जब मैं बम्बई से वापस आया, मैं उसके बारे में बहुत सोचता रहा और मुझे लगा कि मुझे उससे दोबारा मिलना चाहिये। और जब मैं यह सोच ही रहा था, कुन्ती देवी मेरे पास आयी और कहने लगी कि व्रजलीला मेरे बारे में पूछ रही थी। परन्तु मैं उस समय जा न सका, अतः मैंने एक संदेश रिकार्ड किया और उसके पास भेज दिया। फिर कुछ घण्टों बाद मैं उससे मिलने के लिये गया।

वह उस समय तक ठीक ठाक थी और बिना अधिक परेशानी के देख, सुन और बोल सकती थी। हमने कीर्तन किया, और मैंने कृष्ण-कथा पर थोड़ा प्रवचन किया, और उसके बाद उसने मुझसे कुछ प्रश्न पूछे। फिर वह अपनी मृत्यु के विषय को लेकर प्रश्न पूछने लगी और प्रार्थना करने लगी कि मैं उसी प्रकार उसपर कृपा करूँ जिस प्रकार मैंने अर्चा विग्रह पर करी थी। मैंने पूछा, "तुम कहना क्या चाहती हो?" उसने उत्तर दिया कि वह इस बात का आश्वासन चाहती है कि वह मृत्यु के समय सफल हो सके। मैंने उससे कुछ बातें कहीं, और अन्त में वह बोली, "आपका बहुत बहुत धन्यवाद। मेरा संदेह दूर हो गया है।"

अगले दिन, कुन्ती देवी फिर से मुझसे मिलने के लिये आयी और कहने लगी कि उसे ऐसा लगता है कि हालांकि व्रजलीला के लिये सभी कुछ शुभ होता नजर आ रहा है, परन्तु कुछ तो ऐसा है जो ठीक नहीं जान पड़ रहा। उसे लग रहा था कि व्रजलीला अपने गुरु महाराज, इन्द्रद्युम्न स्वामी, की कमी अनुभव कर रही है, और हमें उनसे यहाँ आने के लिये कहना चाहिये। मैंने उसे उनसे सम्पर्क करने का सुझाव दिया। यह इन्द्रद्युम्न महाराज की व्यक्तिगत प्रेरणा और व्रजलीला की शुद्ध भक्ति थी जो उन्हें यहाँ लेकर आई।

जिस प्रयोजन के लिये वे यहाँ आये और जिस प्रयोजन के लिये वह उनको यहाँ बुलाना चाहती थी वह बहुत ही थोड़े समय में पूरे हो गये। मुझे लगता है कि सम्पूर्ण घटना बहुत शुभ रही। वह एक अद्भुत भक्त थी और है। भले ही यह बहुत अल्प समय के लिए रहा हो, किन्तु हमने उसके अंतिम दिनों में, उसके संग से बहुत कुछ सीखा है। इसके लिए हम उसके बहुत आभारी हैं, और हम आशा करते हैं कि वह हमारे ऊपर कृपा दृष्टि बनाए रखेगी और श्रीकृष्ण की भक्ति में आगे बढ़ने में हमारी सहायता करेगी।

मुझे ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि उसके गुरु महाराज चैतन्य महाप्रभु के एक आदर्श प्रतिनिधि हैं, और व्रजलीला का उनकी उपस्थिति में प्रस्थान करना एकदम उचित और बेहद गौरवशाली रहा। हरे कृष्ण।

श्रीपाद इन्द्रद्युम्न स्वामी

जब 1973 में श्रील प्रभुपाद हमारे पैरीस वाले मंदिर आये और व्यासासन पर बैठे थे, सबसे पहले उन्होंने हमें, उनके शिष्यों को, हमारी सभी सेवाओं के लिये धन्यवाद कहा। उस समय मुझे बहुत अटपटा लगा कि मेरे गुरु महाराज मेरी भक्तिमय सेवा से प्रेरित हो रहे हैं और उसके लिये मुझे धन्यवाद कह रहे हैं।

आज, कई वर्षों बाद, उनकी कृपा से मैं समझ सका कि उन्हें ऐसा क्यों लगा। आज मैं भी स्वयं को अपनी शिष्या, व्रजलीला दासी का बहुत ऋणी अनुभव कर रहा हूँ, क्योंकि आज उसने मुझे इतना कुछ सिखाया है। उससे आज मैंने यह सीखा कि किसी शिष्य को अपने गुरु से कितना प्रेम हो सकता है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं भी श्रील प्रभुपाद से उतना ही प्रेम कर सकूँ जितना वह मुझसे करती थी। उसका प्रेम इतना सशक्त था कि वह मुझे हजारों मीलों दूर से रेगिस्तानों और सागरों को पार कराता हुआ यहाँ श्री वृन्दावन-धाम तक खींच लाया ताकि मैं शरीर छोड़ने में उसकी सहायता कर सकूँ।

कुछ दिनों पहले, मैं दक्षिण पोलैण्ड में कहीं एक छोटे से गाँव में एक फ्लैट में बैठा था जब वहाँ का टेलीफोन बजा। वह मेरी शिष्या मानसी गंगा दासी का था। मेरी पहली प्रतिक्रिया थी "उसे यह टेलीफोन नम्बर कैसे मिला?" मैं उस फ्लैट में दो वर्ष पहले गया था और वहाँ केवल पाँच मिनट के लिये ही रुका था। और अचानक भारत से मुझे मानसी गंगा का फोन आता है। वह कहती है, "श्रील गुरुदेव, व्रजलीला बेहद बीमार है और वह किसी भी क्षण अपना शरीर त्याग सकती है। कृपया उसकी सहायता करने के लिये वृन्दावन आ जाईये।"

मैं वहाँ तुरन्त जाने को लेकर हिचकिचाया, क्योंकि मुझे पता था कि व्रजलीला पहले भी ल्यूकेमिया के संकट से गुजर चुकी थी। अनेक वर्षों पहले वह रूस में ल्यूकेमिया के कारण संकटावस्था में थी और उससे बाहर आ गयी थी। मैं पूरी तरह आश्वस्त नहीं था कि इस बार सचमुच ऐसा कुछ होगा। मैं पोलैण्ड छोड़कर जाने को लेकर आश्वस्त नहीं था क्योंकि उस समय हम एक बड़े उत्सव के आयोजन में लगे हुए थे। हम सप्ताह में तीन उत्सव आयोजित कर रहे थे जिनमें पाँच सौ से भी अधिक लोग भाग ले रहे थे। मैं व्रजलीला के संभावित

प्रयाण के लिए वृन्दावन जाने और वहाँ पोलैण्ड में रहकर अपनी सेवाओँ को जारी रखने को लेकर निर्णय नहीं ले पा रहा था।

मैंने सोचा कि वृन्दावन जाने या न जाने की इस उलझन को सुलझाने का केवल एक ही तरीका है कि मैं अपने किसी गुरुभाई से सलाह करूँ। उस शाम, मेरे सेक्रेटरी नृसिंह कवच दास ने टेलीफोन की आंसरिन्ग सर्विस के अंतर्गत आए संदेशों की जाँच करी और पाया कि उन संदेशों में भारत से कुन्ती देवी का एक अस्पष्ट संदेश आया हुआ था। वह भी मुझे वृन्दावन आने के लिये आग्रह कर रही थी क्योंकि व्रजलीला की स्थिति और बिगड़ रही थी। फिर उसने बताया कि गिरीराज महाराज भी यही चाहते हैं कि मुझे आना चाहिये। मैंने तुरन्त ही वृन्दावन में गिरीराज महाराज को टेलीफोन किया और उनके साथ इस विषय पर चर्चा करी। हम इस बात पर सहमत हुए कि मुझे आना चाहिये, परन्तु मैंने बताया कि मैं अधिक समय के लिये अपनी सेवा से दूर नहीं रह सकूँगा। मै यह सोचकर उत्सुक था कि यदि मैं वृन्दावन दो या तीन दिन के लिये आया और व्रजलीला ने आपना शरीर उस दौरान न त्यागा, तब मेरे वहाँ से लौटने पर वह टूट जायेगी। मैंने उनसे पूछा, "ऐसे में चले जाना उचित होगा या रुकना?" मैंने उनसे इस विषय पर तमाल कृष्ण महाराज से चर्चा करने का निवेदन किया और कहा कि मुझे उनका उत्तर स्वीकार होगा। अगले दिन गंधर्विका गिरिधारी ने उनका उत्तर बताने के लिये मुझे टेलीफोन किया, "आपके प्रश्न का उत्तर कोई नहीं दे सकता। कोई नहीं।"

यह उनका उत्तर था। परन्तु उन्होंने बहुत चतुराई दिखाई। उन्होंने यह संदेश गंधर्विका गिरिधारी और वैष्णवी के माध्यम से मुझतक पहुँचाया। जब इन दोनो शिष्याओं ने मुझसे फोन पर बात करी, तो उन्होंने मुझसे आने के लिये बहुत निवेदन किया। अंततः मैं मान गया।

परन्तु मैं अभी भी पोलैण्ड में उत्सवों को बीच में छोड़कर जाने को लेकर चिंतित था। अतः मैं मंदिर के मुख्य कक्ष में गया और श्रील प्रभुपाद से प्रार्थना करने लगा, "श्रील प्रभुपाद, कृपया मुझे कोई संकेत दें जिससे मैं यह जान सकूँ कि जो मैं कर रहा हूँ वह ठीक है।

पैंतालीस मिनट बाद नृसिंह कवच दास मेरे कमरे में भागता हुआ आया। वह बोला, "श्रील गुरुदेव, बी. बी. गोविंद महाराज चाहते हैं कि आप तुरंत रूस में उनसे सम्पर्क करें। उन्होंने सम्पर्क के लिए अपना टेलीफोन नम्बर छोड़ा है।" मैं फोन के पास गया, नम्बर मिलाया और पहली ही बार में फोन मिल जाने पर आश्चर्यचकित रह गया। कभी-कभी रूस फोन लगाने में कई दिन लग जाते हैं। गोविंद महाराज फोन उठाते हैं और कहते हैं, "इन्द्रद्युम्न स्वामी, आपको तुरंत ही वृन्दावन जाना चाहिये। व्रजलीला अपना शरीर छोड़ने वाली है।" मैंने कहा, "महाराज, यह श्रील प्रभुपाद की कृपा है कि आपने मुझसे सम्पर्क किया। मैं वृन्दावन जा रहा हूँ। आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।"

व्रजलीला के निधन के बाद मैंने अनुभव किया कि गुरु और शिष्य का सम्बन्ध कितना गहरा हो सकता है। अपना शरीर छोड़ने से कुछ ही घण्टे पहले वह बहुत अच्छे प्रश्न पूछ रही थी। उत्तर देते हुए मैं यह सोच रहा था कि यह ऐसा लग रहा है मानो भगवान् चैतन्य रामानंद राय से प्रश्न पूछ रहे हों। भगवान् चैतन्य सब जानते थे, किन्तु वे रामानंद राय के मुख से श्रीकृष्ण का गुणगान सुनकर आनंद लेना चाहते थे। व्रजलीला के

प्रश्नों का उत्तर देते हुए मुझे ऐसा लग रहा था कि जैसे उसे उत्तर पहले से ही पता हैं परन्तु वह मुझे श्रील प्रभुपाद और श्रीकृष्ण का गुणगान करने के लिये एक अवसर दे रही है।

श्रीमद्भागवतम् के उस अध्याय में जिसमें ध्रुव महाराज की कथा का वर्णन आता है, श्रील प्रभुपाद ने लिखा है कि ध्रुव महाराज के गुरुओं मे से एक गुरु उनकी माता भी थीं, क्योंकि उन्होंने ही उनको वन में जाकर भगवान् की खोज करने के लिये कहा था। फलस्वरूप ध्रुव महाराज पूर्ण रूप से कृष्ण भावनाभावित हो गये थे। जब वह वैकुण्ठ के विमान में बैठकर भगवद्धाम लौट रहे थे उनको याद आया, "ओह, मेरी माता, सुनीति! वे कहाँ हैं? मैं उनके बिना वापस नहीं जाना चाहता।" भगवान् ने उनकी प्रार्थनाओं का उत्तर दिया, और तभी उन्होंने देखा कि वे भी वैकुण्ठ के एक विमान में बैठकर भगवद्धाम लौट रहीं हैं।

इस लीला के तात्पर्य में, श्रील प्रभुपाद लिखते हैं कि कभी-कभी शिष्य भी गुरु का उद्धार कर सकता है। अतः मैं व्रजलीला से प्रार्थना करता हूँ कि मेरी एक अद्‌भुत कृष्णभक्त शिष्या होने के नाते मुझपर वह अपनी कृपा बनाए रखे।

मैं अपनी एक और अति प्रिय शिष्या गंधर्विका गिरिधारी दासी की सराहना करता हूँ और धन्यवाद कहना चाहता हूँ जिसने दो वर्ष तक व्रजलीला का ध्यान रखा। मैंने व्रजलीला की देखभाल का कार्य उसको सौंपा था और उसने यह सेवा बहुत अच्छी तरह से निभाई। मैं जानता हूँ उसके लिये व्रजलीला का वियोग सहना बहुत कठिन होगा। हम सभी इस वियोग का अनुभव करेंगे, परन्तु मुझे लगता है कि गंधर्विका के लिए यह सबसे कठिन होगा। वह और व्रजलीला जैसे एक ही शरीर थे।

परिशिष्ट 1

निम्नलिखित उद्धरण उन पत्रों से लिए गए हैं जो इंद्रद्युम्न महाराज को व्रजलीला के देहत्याग के उपरांत मिले।

श्रीपाद गिरिराज स्वामी

व्रजलीला नाम कितना उचित है। जब उसे पता लगा कि वह अधिक जीवित नहीं रहेगी, वह केवल श्रीकृष्ण की वृंदावन लीलाओं में ही स्वयं को लीन कर लेना चाहती थी। श्रीवृन्दावन धाम सृष्टी का सर्वोत्तम स्थान है क्योंकि यहाँ पर श्रीकृष्ण की लीलाऐं नित्य चलती रहती हैं। ये अलग बात है कि हम उनकी लीलाओं को देख नहीं पाते हैं, किन्तु हम श्रीकृष्ण और उनके भक्तों की उपस्थिति का अनुभव कर सकते हैं और उनकी कृपा के लिए प्रार्थना कर सकते हैं। यहाँ की धूल का हर कण, हर वृक्ष, हर जंतु, यमुना नदी, गोवर्धन पर्वत और यहाँ पर उपस्थित वे सभी स्थान जहाँ श्रीकृष्ण ने लीलाऐं की थीं उनके प्रेम में पूरी तरह डूबे हुए हैं और हमें भी वह प्रेम देने में सक्षम हैं।

वृंदावन में ईर्ष्या के लिए कोई स्थान नहीं है। व्रजलीला के मन में इंद्रियतृप्ति की कोई इच्छा नहीं थी, अतः उसके मन में कोई ईर्ष्या भी नहीं थी। उसका हृदय सभी के प्रति उदार था। वह बिना किसी ईर्ष्या और द्वेष के किसी भी निष्ठावान् भक्त से श्रीकृष्ण के बारे में श्रवण करने के लिए तैयार रहती थी।

यद्यपि व्रजलीला के पास कृष्णभक्ति में प्रगति के सभी साधन उपलब्ध थे और वह उन सभी साधनों का पूरा लाभ लेने का प्रयास कर रही थी, किन्तु वह पूर्ण संतुष्टी अनुभव नहीं कर पा रही थी जब तक आप नहीं आ गए। और जब उसने सुना कि आप नहीं आ पाऐंगे, वह घंटो रोई। उसकी अंतिम इच्छा आपसे मिलने की थी। वह आपसे श्रीकृष्ण के बारे में सुनना और अपना शरीर आपकी शुभ उपस्थिति में त्यागना चाहती थी। अंततः आप आ गए और उसकी सभी इच्छाऐं पूरी की। फिर वह चली गई। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं भी उसी की तरह शुद्ध और सादगीपसंद बनूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं भी उसी की तरह अपराध-रहित बनूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं भी उसी की तरह भक्तों के प्रति उदारहृदय बनूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं भी उसी की तरह अपने गुरु के प्रति समर्पित बनूँ। और मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं उसे अपनी सेवाओं द्वारा प्रसन्न कर सकूँ।

जब हम प्रचार कार्यों में लगे हुए हों उस समय हम व्रजलीला को याद कर सकते हैं। हर जीव में यह सम्भावना उपस्थित रहती है कि वह व्रजलीला जैसा ही शुद्ध बन सके। हम सैकड़ों लोगों को प्रचार करते हैं इस आशा में कि कोई एक तो उसके जैसा बन सके। यह शुरुआत घर पर किसी कार्यक्रम से, हरिनाम से, किसी पुस्तक से या प्रसाद के एक छोटे से टुकड़े से हो सकती है किन्तु अंततः इन सब प्रयासों का परिणाम एक ही हो सकता है। यहाँ तक कि जब हम किसी जिज्ञासु जीव के मूलभूत प्रश्नों का उत्तर देकर उसकी शंकाओं का समाधान करते हैं तो वह भी अंततः उसी लक्ष्य तक पहुँच सकता है जहाँ आज व्रजलीला पहुच गई है। अतः जब हम प्रचार करें तो हम व्रजलीला के उदाहरण से प्रेरणा ले सकते हैं।

जैसा कि श्रील प्रभुपाद कहते थे, जब कोई वैष्णव हमें छोड़कर जाता है तो हम सुख और दुख का एकसाथ अनुभव करते हैं। हम प्रसन्न इसलिए होते हैं क्योंकि वह भक्त अब श्रीकृष्ण के पास पहुँच गया है और कष्ट इसलिए अनुभव करते हैं क्योंकि अब हम उस भक्त के संग से वंचित हो जाते हैं। किन्तु मैं यह सोचता हूँ कि

जैसे जैसे हैं अपनी भक्ति में अधिक पूर्णता प्राप्त करते हैं वैसे वैसे हम यह समझने लगते हैं कि व्रजलीला एक प्रिय शिष्य, मित्र, और शुभचिंतक के रूप में हमेशा हमारे साथ उपस्थित है। और इस प्रकार वियोग का यह शोक उसके संग की प्रसन्नता में परिवर्तित हो जाता है।

मानसी गंगा दासी

पिछला सप्ताह मेरे लिए बेहद कठिन भी था और आनंदपूर्ण भी। जब आपने वैष्णवी दासी और मुझे सब काम छोड़कर व्रजलीला की देखभाल कर रही गंधर्विका गिरिधारी दासी की सहायता करने के लिए कहा, हम दोनों ही पूरा समय अक्सर वहाँ रहते थे। व्रजलीला की बिगड़ती हालत पर नजर रखने और उसकी किसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए रातभर जागने की जिम्मेदारी मेरी थी। मैं दिन के दौरान थोड़े समय के लिए घर सोने के लिए जाती और फिर वापस सहायता के लिए आ जाती थी।

उन दिनों वह बहुत पीड़ा का अनुभव कर रही थी। हम उसकी मालिश करते, उसे पंखा झलते और उससे बाते किया करते। वह बड़ा कठिन था क्योंकि हम समझ नहीं पाते थे कि उसे क्या चाहिए। किन्तु इस सबके बावजूद वह बेहद विनम्र थी। अंत समय तक, यदि वह कुछ भी मांगती और हम उसे वह लाकर दे देते, तो बह बहुत आभारी होती। एक समय जब यह लगने लगा था कि आप नहीं आ पाएँगे, गंधर्विका ने मेरे व्रजलीला से मिलने पर रोक लगा दी। व्रजलीला को यह मालूम था कि मैं आपके संपर्क में हूँ, और हर बार जब भी वह मुझे देखती तो पूछती कि क्या मैंने आपसे बात की या नहीं और यह भी कि आपने क्या कहा।

फिर हमें पता लगा कि आप आ रहे हैं, किन्तु उसकी हालत दिन पर दिन बिगड़ती जा रही थी। सभी भक्तों ने प्रार्थना शुरु कर दी कि वह आपके आने तक जीवित रहे। उसकी आपसे मिलने की बड़ी तीव्र इच्छा थी। एक रात उसे बारह घंटे तक बिना ऑक्सीजन के रहना पड़ा था। हमें नहीं लगता था कि वह बचेगी, और सभी निश्चित रूप से कह सकते हैं कि आपसे मिलने की तीव्र इच्छा के कारण ही वह उस रात जीवित बच पाई। हम उसे कहते रहे कि आप आ रहे हैं और वह हौंसला न छोड़े। वह क्षण बेहद सुखद था जब आप उस सुबह दरवाजे के अंदर आए। मुझे लगता है कि वो जानती थी कि आप उसे भगवद्धाम पहुँचाने के लिए ही आए हैं। मुझे वास्तव में लगता है कि वह सिर्फ आपसे मिलने के लिए ही जीवित थी। और फिर जब आप आ गए वह जान गई कि अब सब ठीक है और वह जा सकती है, अतः वह उसी दिन चली गई।

आप उसके पलंग के एक तरफ कुछ लिख रहे थे। गंधर्विका और मैं दूसरी तरफ थे। मैं उसे पंखा कर रही थी और गंधर्विका उसे मीठा दूध पिला रही थी। फिर उसने ध्यान दिया कि व्रजलीला अपना मुँह नहीं खोल पा रही है। उसका जबड़ा जकड़ चुका था और वह कंपकंपाने लगी थी। यह एक अशुभ लक्षण था, और हमने आपको तुरंत सूचित किया। आपने तुरंत लिखना बंद किया और कीर्तन आरम्भ कर दिया।

मुझे याद नहीं कीर्तन कितना लंबा चला। मुझे याद है कि भक्तगण कमरे में आ रहे थे, किन्तु यह ध्यान नहीं कर सकी कि वे कौन थे। व्रजलीला बुरी तरह से साँस ले रही थी और उसे बड़ी कठिनाई हो रही थी। आप और गंधर्विका उसके पलंग के बराबर में थे और मैं गंधर्विका के बराबर में बैठी हुई थी। किसी ने मुझे राधा-श्यामसुन्दर का चित्र दिया उसे दिखाने को। समय जैसे थम गया था और ऐसा लगा कि दुनिया सिमट कर आप, गंधर्विका, व्रजलीला और मुझतक सीमित रह गई है। मैं पूरे समय व्रजलीला का चेहरा देखती रही। वह राधा-श्यामसुन्दर के चित्र की ओर देख रही थी और आपको सुन रही थी। आप उसे कह रहे थे कि वह मन में जप करे, पवित्र नाम को सुने, और ध्यान करे कि श्रीकृष्ण कितने सुन्दर हैं। एक समय, मुझे लगता है कि

उसकी दाईं आँख जवाब देने लगी थी। मैंने ध्यान दिया कि वह धुंधली पड़ने लगी थी और मैं उसकी आँख की पुतली और आँख के रंगीन भाग में अंतर नहीं कर पाई। मेरा विचार है सम्भवतः वह चली गई, किन्तु उसकी बाईं आँख अंत तक साफ थी। वह आपको पूरा समय सुन रही थी। आरम्भ में वह डरी हुई लग रही थी, किन्तु अंत में जब उसे लगने लगा कि वह अपना शरीर छोड़ने वाली है, उसका डर चला गया लगता था।

मैं अंतिम पाँच मिनट कभी नहीं भूल पाऊँगी। अब यह साफ था कि वह जाने वाली है। उसने गहरी साँसें लेनी शुरु कर दी थीं। हम समझ चुके थी कि अब समय आ गया है। सभी एकसाथ एक स्वर में कीर्तन करने लगे थे। उसकी आँखें ऊपर चढ़ने लगी थीं, अतः मैंने चित्र को रखा और अपना हाथ उसके कंधे पर रख दिया, और पावन नामों का जोर-जोर से उच्चारण करने लगी। मैंने ध्यान दिया कि आप भी जोर से कीर्तन कर रहे थे। उस समय कीर्तन पूरे जोर-शोर से हो रहा था। फिर हमें लगा कि वह चली गई। किसी ने उसके मुँह में तुलसी रखी। किन्तु तभी एक साथ आपने और मैंने ध्यान दिया कि उसकी गर्दन हिल रही थी। हमने जोर से कीर्त करना जारी रखा। किन्तु बस केवल तीस सेकेन्ड की बात और बची थी। उसने बस एक आखरी साँस ली और चली गई। मुझे लगता है कि मैंने वह पल देखा है जब उसने अपना शरीर छोड़ा। मैंने उसकी आँखों की पुतली पूरी तरह फैली हुई देखी, और निश्चित रूप से कह सकती थी कि वह चली गई है। फिर मैंने गंधर्विका को गिरते हुए देखा। मैं उसे गिरने से पहले पकड़ने में कामयाब रही। मैंने उसे अपनी बाँहों में कसकर पकड़ रखा था। जब मैंने ऊपर देखा तो पाया कि आप उसके पलंग के एक ओर झुक कर रो रहे थे।

मृत्यु को लेकर यह मेरा पहला अनुभव है। इससे पहले मेरे लिए यह एक रहस्यमयी वस्तु थी और मैं इससे सदा भयभीत रहती थी। किन्तु व्रजलीला का देहावसान देखने के बाद मैं अब इससे भयभीत नहीं हूँ। हमारे अंत समय में श्रीकृष्ण का स्मरण दिलाने के लिए जब तक भक्त हमारी सहायता करने के लिए उपस्थित हैं, मैं निश्चित रूप से कह सकती हूँ कि वे सुरक्षित हैं। मेरा मानना है कि आपने व्रजलीला को भगवद्धाम पहुँचा दिया है।

जब तक आपके वृन्दावन आने का कार्यक्रम निश्चित नहीं हो पाया था, व्रजलीला निराश थी। एक दिन उसने मुझसे वे सभी पत्र लाने के लिए कहा जो मैंने आपसे प्राप्त किए हैं। मैंने वे पत्र उसके लिए पढ़े। उसे बहुत आश्चर्य था कि मेरे पास इतने सारे पत्र हैं। मैंने आपसे पिछले कुछ वर्षों में आपसे कई पत्र प्राप्त किए हैं और वे सभी मैंने सम्भालकर रखे हैं। वह उन सभी पत्रों को सुनकर बड़ी प्रसन्न हुई थी। उसने मुझे बताया कि उसने आपसे सिर्फ एक ही पत्र प्राप्त किया था। किन्तु जब मैंने उसकी मृत्यु पर आपकी प्रतिक्रिया देखी, और देखा कि आप हम सब की कितनी परवाह करते हैं, मैं एक गुरु और शिष्य के सम्बंध के बारे में बहुत कुछ जान पाई। यह एक आध्यात्मिक सम्बंध है। गुरु के साथ शिष्य की व्यक्तिगत उपस्थिति और गुरु का प्रत्यक्ष संग लेना महत्वपूर्ण है, किन्तु ऐसा संग उस गहरे आध्यात्मिक संग के सामने तुच्छ है जो शिष्य गुरु की सेवा और उनके स्मरण से प्राप्त करता है। मैं यह देख पाई कि आप उससे कितना अधिक प्रेम करते हैं, और यही सोचकर मैं इतना रोई। आप अपनी आध्यात्मिक पुत्री के वियोग में रो रहे थे, और मैं इसलिए रो रही थी क्योंकि मैं नहीं जानती थी कि आप अपने शिष्यों की इतनी परवाह करते हैं। तो अपनी बहुत विशेष गुरुबहन के देहावसान पर यही है मेरी श्रद्धांजलि। वास्तव में मैं इस समय बेहद निराश हूँ क्योंकि मुझे नहीं लगता कि मैं आपको कभी भी इतना प्रसन्न कर पाऊँगी जितना कि व्रजलीला या गंधर्विका गिरिधारी कर पाईं हैं। मैं आशा करती हूँ कि गंधर्विका का संग लेकर मैं उससे कुछ सीख पाऊँ।

कुमारी कांता देवी दासी

यह मेरा सौभाग्य था कि मैं आपकी प्रिय शिष्या व्रजलीला देवी दासी का उसके अंतिम दिनों में संग प्राप्त कर सकी। मैं उसके साहस और दृढ़ता, उसके विचारों की शुद्धता, और उसका आपके लिए असीम प्रेम को देखकर दंग थी। मैंने देखा कि उसका आपके लिए लगाव इतना तीव्र तथा आपमें और आपके निर्देशों में विश्वास इतना गहरा था कि श्रीकृष्ण ने स्वयं यह व्यवस्था की कि आप हजारों मील दूर से यात्रा कर यहाँ उसके अंतिम समय पर उसके साथ रह पाए। वह बस आपके लिए ही प्रतीक्षा कर रही थी।

उसका अपने गुरु में प्रेम और विश्वास तथा आपका अपनी शिष्या के लिए अगाध प्रेम देखकर मुझे बहुत आशा और प्रेरणा मिलती है। हम देख सकते हैं कि इस्कॉन गुरुओं के शिष्य शुद्ध बन रहे हैं और पूर्ण कृष्णचेतना में अपने शरीर त्याग रहे हैं। हम इस बात के भी साक्षी हैं कि भक्तों के बीच एक सुन्दर परस्पर सहयोग की भावना है और कठिन समय में वे एक दूसरे की सहायता करने के लिए भी तत्पर हैं। साथ ही साथ हम देख पा रहे हैं श्रील प्रभुपाद के शिष्यों की निष्ठा और समर्पण, जैसा कि आपके उदाहरण से साफ है, जो अपने शिष्यों के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को इतने प्रेमपूर्ण ढंग से निभा रहे हैं।

इन अमूल्य क्षणों को हमारे साथ बाँटने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं आपके और आपके शिष्यों के संग को पाकर स्वयं को बहुत शुद्ध अनुभव कर रही हूँ।

महामाया देवी दासी

आपने मेरे अनुभव के बारे में पूछा है, क्योंकि मैं वहाँ उपस्थित थी जब व्रजलीला देवी दासी ने अपना शरीर छोड़ा। सर्वप्रथम तो मुझे इस बात को लेकर बड़ा अचंभा है कि हमें श्रील प्रभुपाद की कृपा प्राप्त है जिसकी वजह से हमें इस बात की जानकारी है कि वृन्दावन नाम की कोई जगह भी इस दुनिया में अस्तित्व में है। यह तो बहुत दूर की बात है कि हम यह भी समझ पाए हैं कि इस जगत को छोड़ने का सबसे शुभ तरीका श्रीवृन्दावन धाम में वैष्णव भक्तों के संग में भगवान् के पावन नामों का जप करते हुए है। यह श्रील प्रभुपाद की महिमा ही है कि व्रजलीला अपना शरीर इतनी शुभ परिस्थितियों में छोड़ पाई।

मुझे किसी प्रकार ये अवसर प्राप्त हुआ कि मैं व्रजलीला के अंतिम समय में पावन नामों को जप कर पाई। मेरा मानना है कि हालांकि आप, व्रजलीला के आदरणीय गुरुदेव, और अन्य वैष्णव उस समय उसके पास उपस्थित थे पर फिर भी उसे अपना जहाज खुद ही उड़ाना था। हम उसे प्रोत्साहित कर सकते थे या फिर उसके लिए पावन नामों का कीर्तन कर सकते थे, पर अंततः उसे ही उस क्षण से जूझना था जब आत्मा शरीर से अलग होती है। हम तो बस थोड़ा बहुत जो कुछ कर पाए वह हमने किया, किन्तु हम उस अनुभव से नहीं गुजर पाए जिससे वह गुजरी। किन्तु मुझे अब इस बात को आभास और अधिक गहरा है कि यह सब मेरे साथ और अन्यों के साथ भी होगा। इस आभास के कारण मैं यह प्रार्थना कर रही हूँ कि जब मैं अपना शरीर छोड़ूँ तो वह भी वृन्दावन में पावन नामों का जप करते हुए भक्तों के बीच हो। व्रजलीला कितनी भाग्यशाली थी।

मेरा उसके साथ कोई बहुत गहरा संबंध नहीं था। मैं तो मात्र उसकी थोड़ी बहुत सेवा करती थी। जिस सप्ताह वह गुजरी, मैंने उसके कमरे में कुछ अवसरों पर कीर्तन किया था। एक अवसर पर गंधर्विका देवी दासी, मधुसेविता प्रभु की शिष्या, बड़ा ही मधुर कीर्तन कर रही थीं, जब उसे यह पता लगा कि आप उससे मिलने वृन्दावन आ रहे हैं। उसके बाद 13 अक्तूबर को मैं उसके कमरे के पास से गुजर रही थी जब मैंने सोचा कि उससे मिल लूँ। जब मैं अंदर थी तो मुझसे करताल बजाने का आग्रह किया गया। पहले तो मैंने मना किया

क्योंकि मुझे एक जरुरी मीटिंग में जाना था पर फिर मुझे लगा कि उसके कमरे में उपस्थिति अधिक आवश्यक है और यह कि मीटिंग में उपस्थित भक्त मेरे इस निर्णय को समझ पाएँगे और उन्होंने ऐसा किया भी। अतः यह मेरा बड़ा सौभाग्य था कि मैं व्रजलीला के प्रयाण का अनुभव कर पाई और इसमें भाग ले पाई। मैं यह सोच रही हूँ कि यह जीवात्मा आखिर कौन थी जो इतनी भाग्यशाली है कि उसने इतने शुभ अवसर पर अपना शरीर छोड़ा। व्रजलीला के जाने के बाद मैं हम उन सब की ओर देख रही थी जो अभी भी इस भौतिक जगत में फँसे हुए हैं, और सोच रही थी कि हम सब इस बात से इतने अनभिज्ञ क्यों हैं कि यह जीवन कितना क्षणिक है। अब जब कुछ दिन बीत चुके हैं, मुझपर फिर से वही पुरानी सोच हावी हो गई है, और इसलिए मैं यह जानती हूँ कि जो कुछ मैंने व्रजलीला के प्रयाण से सीखा, वह पूरी तरह आत्मसात नहीं हो पाया है। लेकिन कुछ भी कहें मैं यह अनुभव कभी भुला नहीं पाऊँगी।

मैं यह भी कहना चाहूँगी कि मैं अपनी शिष्या के प्रति आपकी उदारता से बड़ी प्रभावित हुई हूँ। आप अपने प्रचार के व्यस्त कार्यक्रम को छोड़कर इतनी दूर वृन्दावन उससे मिलने आए। आपने अपने आराम की कोई परवाह नहीं की और उसके अंतिम क्षणों में अपनी कृपा की अंतिम बूँद तक उसे दे डाली।

अंत में मैं बस यह कहना चाहूँगी कि यह कितना अद्भुत था कि व्रजलीला देह त्याग के अपने अंतिम क्षण का चुनाव कर पाई और आपके आने तक रुक पाई।

नारायणी दासी

पिछले कुछ महीनों में मुझे व्रजलीला का थोड़ा संग प्राप्त हुआ। वह मंदिर में बैठ कर जप किया करती और मैं कभी कभी उससे बात किया करती। वह बहुत प्रसन्नचित्त रहती, और जब मैं उससे पूछती कि वह कैसी है तो वह बस मुस्कुरा देती और कहती "ठीक हूँ" या फिर "इतनी अच्छी नहीं हूँ"। उसकी उम्र ही क्या थी किन्तु आध्यात्मिक जीवन को लेकर वह बड़ी गंभीर थी। मैं कुछ समय के लिए उससे मिल नहीं पाई, किन्तु मैंने उसे उसके अंतिम दिनों में देखा। वह इस बात को लेकर बड़ी सचेत थी कि उसके चारों ओर क्या चल रहा है। अपना शरीर त्यागने के चार दिन पहले, मैं उसके कमरे में गई, और वहाँ एक मायावादी महिला थी जिसने गेरुए वस्त्र पहन रखे थे। वह श्रील प्रभुपाद की टेप पर, जो उस समय वहाँ चल रही थी, निंदाजनक टिप्पणियाँ कर रही थी। व्रजलीला ने तुरन्त उसे कमरा छोड़कर चले जाने के लिए कहा। फिर मैंने तम्बूरा उठाया और हरे कृष्ण कीर्तन करने लगी। व्रजलीला शांत हो गई और फिर सो गई।

अगले दिन जब मैं वापस आई तो मैंने देखा कि वह दूध पी रही थी, जो उसने एक लम्बे समय से नहीं किया था। भक्त बड़े प्रसन्न थे। डाक्टरों के अनुसार, उस समय तक उसके जीवित नहीं बचना चाहिए था। किन्तु मुझे लगता है कि वह आपकी, अपने गुरु महाराज की, ही आने की प्रतीक्षा कर रही थी, अतः उसने दूध पिया ताकि वह आपके आने तक जीवित बच पाए।

अगली बार जब मैं व्रजलीला से मिली तो वह उसके जीवन का अंतिम घंटा था।शाम के 3-00 बज रहे थे और आप उसके दाहिने कान में हरे कृष्ण महामंत्र बोल रहे थे, तथा कीर्तन की अगुआई कर रहे थे और वहाँ उपस्थित भक्त आपके पीछे-पीछे कीर्तन दोहरा रहे थे। वह कीर्तन बहुत गंभीर था, किन्तु न तो ज्यादा तेज और न ही ज्यादा ऊँची आबाज में था। गंधर्विका भी उसके बाऐं कान में जप कर रही थी। मानसी गंगा उसके सामने राधा-श्यामसुंदर की दो 8" x 10" की तस्वीरें पकड़ कर खड़ी थी और गंधर्विका गोवर्धन लीला की तस्वीर ठीक व्रजलीला के चेहरे के सामने पकड़ कर खड़ी थी। मुझे बताया गया कि व्रजलीला को बचाने के

सभी प्रयास जैसे ऑक्सीजन, इंजेक्शन, दर्दनिवारक दवाईयाँ सब बेकार साबित हो रही थीं। व्रजलीला को बड़ा संघर्ष करना पड़ रहा था, किन्तु वह पावन नामों का जप करने में अपना पूरा जोर लगा रही थी, क्योंकि आप उसे प्रोत्साहित कर रहे थे। वह अपना हाथ बढ़ाकर चित्रों को छूती और उन्हें देखती, और मुझे लगता है कि वह अपने जीवन के अंतिम क्षण तक जप करती रही। कई भक्त रो रहे थे, मैं भी रो रही थी क्योंकि मुझे लगा कि वह कितनी भाग्यशाली है। उसके पास स्वयं आप थे जो उसे सब कुछ बता रहे थे और उसके अंतिम मिनट तक भी उसके लिए जप कर रहे थे। वह केवल 19 वर्ष की थी किन्तु फिर भी जीवन के अंतिम लक्ष्य को पा लिया। और यहाँ एक मैं हूँ जो 24 वर्षों से भक्ति कर रही हूँ, और सम्भवतः मुझे और 20-30 वर्ष और इस जगत में बिताने पड़ेंगे। सम्भव है कि मैं श्रीकृष्ण को भूल जाऊँ, और सम्भवतः मुझे वृन्दावन में शरीर त्यागने का अवसर न मिल पाए। मैं प्रार्थना करती हूँ कि मुझे भी व्रजलीला के समान ही कृपा मिल पाए और मैं भी वृन्दावन में भक्तों की बीच, जो हरे कृष्ण महामंत्र का जप कर रहे हों और मुझे भगवान् का स्मरण करा रहे हों, अपनी देह त्याग पाऊँ।

पार्वती दासी

जिस दिन व्रजलीला गुजरी मैं भी उसके कमरे में ही थी। मैं उसके कमरे में एक ऐसे स्थान पर खड़ी थी जहाँ से मैं आपको बहुत साफ-साफ देख पा रही थी। मैंने बहुत ध्यान से देखा कि कैसे आप अपनी कृपा व्रजलीला को दे रहे थे। आप अपने हाथों और घुटनों के बल झुके हुए थे ताकि आप व्रजलीला दाएें कान में जप कर सकें और गंधर्विका उसके बाएें कान में। जप करते करते आप व्रजलीला से बातें भी कर रहे थे और उसे बता रहे थे कि उसे क्या करना है। मैं यह पूरे विश्वास से कह सकती हूँ कि व्रजलीला इस पूरे अनुभव के दौरान आपसे जुड़ी रही, बिल्कुल अपने अंत समय तक। मैं यह सोचती रही कि वह कितनी भाग्यशाली है कि उसके अंत समय में उसके गुरु स्वयं उसके साथ थे और उसके आत्मविश्वास को बल दे रहे थे। आप मुख्य रुप से उसे यही कह रहे थे कि “हरे कृष्ण महामंत्र का जप करती रहो”। आपका कीर्तन कितना प्रभावशाली था। मुझे नहीं याद पड़ता कि इतना गहन अनुभव मुझे अपने जीवन में पहले कभी हुआ हो। उस कमरे में उपस्थित सभी भक्त भगवान् के नामों के इतने सुंदर कीर्तन से मंत्रमुग्ध थे। वहाँ पर और कुछ नहीं था – बस आपका कीर्तन और गंधर्विका गिरिधारी का व्रजलीला के नेत्रों के सम्मुख गोवर्धन लीला का चित्र पकड़ना। उस पूरे कमरे का वातावरण उत्साह और जोश से भरपूर था। मैंने रुई पर राधा कुण्ड का जल टपकाकर गंधर्विका को दिया ताकि वह व्रजलीला के मुख में डाल सके। फिर मैंने जल आपके हाथ पर डाला ताकि आप उसे व्रजलीला के मस्तक पर लगा सकें। जैसे-जैसे व्रजलीला को साँस लेने में अत्यधिक कठिनाई होने लगी, आपके कीर्तन ने सभी को दिव्यता के एक अप्रत्याशित स्तर पर पहुँचा दिया था। वह कीर्तन नई-नई ऊँचाईयों पर पहुँचा और व्रजलीला को उसके शरीर के बाहर तक खींच लाया। अचानक उसकी अंतिम गहरी साँसें रुक गईं और मैंने राधा-कुण्ड के जल में भीगी रुई उसके मुँह में निचोड़ दी। मैंने उसके मुख में तुलसी दल भी रखने का प्रयास किया किन्तु वह ठीक से डल नहीं पाया और गिर गया। तब नन्दुलाल ने दूसरा तुलसी दल उसके मुख में रखा। उसके बाद व्रजलीला की ऊँगली बस एक बार और फड़की और महामंत्र ने व्रजलीला को सम्भाल लिया।

रोहिणीनंदन दास

जब मैंने व्रजलीला माताजी को कुछ दिन पहले देखा तो मुझे एक 19 वर्षीय लड़की को एसी दशा में देखकर बड़ा अफसोस हुआ। किन्तु जब मैंने उनके आग्रह पर उनके लिए पुस्तक पढ़ना आरम्भ किया तो मैं विस्मित

था और उनके संग से बड़ा प्रभावित हुआ। फिर जब भी मेरे पास खाली समय होता तो मुझे उनसे मिलने की इच्छा होती। मैं यह देख सका कि कैसे एक भक्त अब अपने करोड़ों जन्म-मृत्यु के चक्करों को समाप्त करने जा रहा है। चूँकि उन्हें वृन्दावन में देह त्यागने का परम सौभाग्य प्राप्त था और वे यह जानती थीं कि मृत्यु बहुत निकट है, उन्होंने स्वयं को अपनी मृत्यु के लिए हर पल तैयार किया। वे यह बड़े स्पष्ट रूप से जानती थीं कि इसके लिए उन्हें क्या चाहिए। मैं उनकी सादगी और ईमानदारी से बड़ा प्रभावित हुआ। उन्होंने अपने साहस से अपने भय पर विजय प्राप्त करी। उन्हें पूर्ण कृष्णभावना में देह का त्याग करते देखना बड़ा अद्भुत था। आप उन्हें बार-बार विश्वास दिला रहे थे, समझा रहे थे और हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन कर रहे थे। अपनी मृत्यु से बस कुछ ही क्षण पहले, मैं उनका आपकी ओर अंतिम बार देखना नहीं भूल सकता, मानो वे आपसे पूछ रही हों, "क्या मैं ठीक कर रही हूँ?" निश्चित रूप से उन्होंने अपनी मृत्यु की परीक्षा उच्चतम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इन घटनाओं के दौरान मुझे अनेक बार यह विचार आए कि जन्म और मृत्यु में कितनी समानता है। हालांकि मेरे पास एक पुरुष का शरीर है और मुझे अपने पूर्व जन्मों और मृत्यु के बारे में याद नहीं है। किन्तु फिर भी मैं कुछ समानताऐं देख सकता हूँ जैसे पीड़ा, भय, आनन्द, एक ऐसा वातावरण कि कुछ होने वाला है, कुछ खोने या पाने का भाव। साथ ही साथ कड़ी मेहनत, यह भाव कि कहीँ फँस गए, कि बस यह सब अब समाप्त हो जाए, कि कुछ खो गया, और फिर पुनः अपनी ऊर्जा को वर्तमान में केंद्रित करना – अपनी संतान को जन्म देना या अपनी आत्मा का उद्धार करना। और फिर जब जन्म और मृत्यु का वह विकट क्षण आता है तो कैसे सब चारों तरफ एकत्रित हो जाते हैं। और सम्भवतः सबसे बड़ा बात तो यह है कि हालांकि जन्म और मृत्यु एक साधारण और सामान्य घटना है, किन्तु ये दोनों अविश्वसनीय रूप से असाधारण भी हैं। मैं बारम्बार व्रजलीला माताजी को तथा श्रीकृष्ण की दिव्य शक्ति मायादेवी को अपने दण्डवत प्रणाम अर्पण करता हूँ क्योंकि हालांकि मुझे व्रजलीला के जीवन का, मरण का, शव का, चिता की अग्नि में राख में परिवर्तित होने का, एक बड़ा विविध अनुभव हुआ, और यह जानते हुए भी कि ऐसा मेरे साथ भी होगा, किन्तु मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता। मेरा मन इस विचार से मुँह मोड़ता हुआ सा प्रतीत होता है। जैसाकि महाराज युधिष्ठिर ने कहा है, "यही भ्रम इस जगत में विचित्र रूप से सबसे अद्भुत वस्तु है।"

श्यामासुन्दरी दासी

गन्धर्विका ने मुझे बताया कि आप उन भक्तों से अनुभव एकत्रित कर रहे हैं जो व्रजलीला के देहावसान पर वहाँ उपस्थित थे, अतः मैंने सोचा कि कुछ लिखुँ। उसके गुजरने का मेरे हृदय पर बड़ा असर हुआ है। मैं उसे थोड़ा ही जानती थी। भाषा के अवरोध के कारण हमारे बीच इतनी बातचीत नहीं हो पाई थी, किन्तु मुछे उनका मधुर और संकोची स्वभाव वहुत अच्छा लगता था। वह कभी-कभी मेरे यहाँ हमारी सखी गोविंद दासी के साथ आती थी जिसके घर में व्रजलीला रह रही थी। हम सब मेरे पूजा के कमरे में बैठे थे, तथा जब मैं और गोविंद दासी बातचीत कर रहे थे तो वह चुपचाप मेरे गौर-निताई विग्रहों को, उनके ऊपर राधा-कृष्ण की पेंटिंग को तथा प्रभुपाद के विग्रहों को देख रही थी।

फिर एक दिन मुझे पता लगा कि वह बहुत बीमार है और मैं उससे मिलने गई। मैं यह देख सकती थी कि वह स्वयं को मृत्यु के लिए तैयार कर रही है और यह कि वह कृष्णभक्ति और भक्तों का संग प्राप्त करने के लिए बड़ी उत्सुक है।

अन्यों के प्रति अपने मधुर स्वभाव के कारण, और चूँकि वह एकदम विवश जान पड़ती थीं, कई भक्त उसके लिए कुछ करने के लिए आतुर थे। मैंने उसके लिए थोड़ी ही सेवा करी अधिक नहीं। उसे बड़े अच्छे और निपुण भक्तों का संग प्राप्त था जो उसकी सहायता आध्यात्मिक तथा शारीरिक दोनो रूप से कर रहे थे। जो सबसे अच्छी बात मैं उसके लिए कर सकी वह था श्रीकृष्ण से प्रार्थना कि वे उसकी सभी इच्छाएँ पूरी करें और यह कि जब वह अपना शरीर छोड़े तो उसके गुरु उसके पास उपस्थित हों। दिन पर दिन उसका दर्द बढ़ता ही जा रहा था जो सहन नहीं हो पा रहा था, हालांकि गंधर्विका माताजी और अन्य भक्त पूरा प्रयास कर रहे थे कि व्रजलीला श्रीकृष्ण का स्मरण कर सके। किन्तु ऐसा लग रहा था कि किसी चीज की कमी है और केवल जब आप वहाँ आ गए तो मुझे लगा कि अब व्रजलीला जा सकती है और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकती है।

मैं वहीं थी जब उसने अपना शरीर छोड़ा, और यह अनुभव मैं कभी नहीं भुला पाऊँगी। मैं गुरुकृपा की शक्ति, पावन नामों की शक्ति तथा भक्तों की प्रार्थनाओं के शक्ति को देखकर बड़ी चकित थी। मैं अपनी आँखों से गुरु के साथ हृदय का वह अंतरंग संबंध देख सकी जिसके लिए मैं स्वयं ललायित रहती हूँ। वहाँ मुझे देहात्म बुद्धि नहीं दिख रही थी, वहाँ तो बस आत्मा का आत्मा से जो प्रेम का संबंध होता है बस वही दिख रहा था। मैं देख सकी कि कैसे गुरु अपने शिष्य का सर्वश्रेष्ठ सेवक होता है और यह कि वे हमसे इतना प्रेम करते हैं जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। मैं यह भी देख पाई कि कैसे जब एक शिष्य अपने गुरु को पूर्ण रुप से समर्पित कर देता है तो कैसे वह उनको अपने शक्तिशाली प्रेम से बाँध लेता है। यह सब प्रत्यक्ष देखने के बाद मेरी बड़ी आशा बंधी और अपने जीवन को मेरे गुरु महाराज की सेवा में समर्पित करने के लिए मन और अधिक एकाग्र हुआ। वहाँ का वातावरण बहुत गहन था; हर कोई भगवान् के नामों का पूरे हृदय से कीर्तन कर रहा था। हम सब व्रजलीला को श्रीकृष्ण के चरणों की धकेलने पूरा प्रयास कर रहे थे। उसे साँस लेने में बड़ी कठिनाई हो रही थि किन्तु अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति और आपकी उपस्थिति के कारण वह भगवान् का नाम ले पाई। भगवान् का नाम स्मरण करने में उसकी सहायता करने को लेकर मैं उसका, आपका, तथा अन्य भक्तों का प्रयास देखकर अत्यधिक प्रभावित हुई। भक्तों के संग का सार बस यही है – अंत समय में श्रीकृष्ण का नाम स्मरण रहे।

व्रजलीला की सहायता करने का अनुभव गहन था। हालाँकि हम सब प्रसन्न थे कि उसे अपना लक्ष्य मिल गया किन्तु हमें उसकी कमी का भी अनुभव हो रहा था क्योंकि हरेक भक्त अपने आप में अनुपम होता है। उसका संग बड़ा कीमती था।

मैं आपकी बड़ी आभारी हूँ महाराज, और व्रजलीला की भी तथा अन्य सभी भक्तों की जिन्होंने उसकी इतनी सहायता करी। इस अनुभव के कारण मैं श्रील प्रभुपाद की शिक्षाओं को अधिक गहराई से समझ पाई हूँ और साथ ही साथ गुरु-शिष्य संबंध के बारे में मेरी समझ बेहतर हुई है।

कालिंदी दासी

जब व्रजलीला ने इस संसार से प्रस्थान किया तो मैं वहीं थी। इस अनुभव का मेरे जीवन पर इतना गहरा असर हुआ है कि मैं यह छोटा सा प्रशंसा पत्र आपको लिख रही हूँ। मैंने इससे पहले भी भक्तों को वृन्दावन में शरीर छोड़ते हुए देखा है किन्तु यह अनुभव विशेष था। यह अनुभव कितना प्रेरणादायी और जीवंत था जिसने मेरी भीतर की भावनाओं को हिला कर रख दिया।

इस अनुभव के कारण मेरा हृदय अनुभूतियों से ओत-प्रोत है, और मैं प्रार्थना करती हूँ कि ये मेरे हृदय पर एक ऐसी गहरी छाप छोड़ें जिससे कि जीवन भर ये मेरे साथ रहें। श्रीकृष्ण और व्रजलीला की कृपा के कारण मैं कृष्णभक्ति की मधुरता चख पाई, भगवान् के नामों की शक्ति अनुभव कर पाई, भक्तों के बीच प्रेम के संबंध को देख पाई, और यह समझ पाई कि कैसे गुरु और शिष्य का संबंध इतना गंभीर, महत्वपूर्ण और शुद्ध प्रेम पर आधारित होता है।

यह मेरा सौभाग्य था कि मैं व्रजलीला के लिए थोड़ी सेवा कर पाई। मेरी उससे पहले से कोई मित्रता नहीं थी, किन्तु देहान्त से दो सप्ताह पहले मैंने उसे देखने जाना आरम्भ किया था। उसके प्रति मेरा स्नेह दिन प्रतिदिन तब तक बढ़ता गया जब तक मुझे एहसास नहीं हुआ कि उसने तो मेरा हृदय ही चुरा लिया है। अपनी शुद्धता और निष्कपटता के कारण वह बड़ी स्नेहमयी थी। उसके देहांत के बाद मैंने उसके शरीर को राधाकुण्ड के जल में स्नान कराने में सहायता करी और फिर नए वस्त्र पहनाए। वह भीतर से बहुत सुंदर थी और एक बार फिर उसकी शुद्धता ने मेरा ध्यान आकर्षित किया। उसके कोमल मस्तक पर मैंने चन्दन में लिपटी तुलसी का पत्ता रखा और वहाँ तिलक लगाया। किसी ने वहाँ संस्कृत में भगवान् के नाम लिखे। ये क्षण मेरे साथ जीवनभर रहेंगे।

वहाँ उपस्थित अन्य भक्तों की भाँति मैं भी श्रीकृष्ण की बड़ी आभारी हूँ कि उन्होंने इस प्रकार मुझ पर कृपा करी। कुछ भक्तों ने यह स्वीकार किया है कि कैसे इस पवित्र घटना से उनका हृदय परिवर्तन हुआ है।

पहली बार जब मैं व्रजलीला से ललित आश्रम में मिलने गई तो उसने मुझसे प्रार्थना करने के बारे में प्रश्न पूछे – हमें क्या प्रार्थना करनी चाहिए और तीव्रता से प्रार्थना कैसे करें। मुझे लगता है कि उसे उत्तर मालूम थे। वह यह जानने के लिए दृढ़ थी कि कैसे श्रीकृष्ण को अपने हृदय में लाया जाए और यह कि वे लगातार उसके मन में कैसे बसे रहें। मैंने उससे कहा कि वह उनसे आने के लिए याचना करे और इस बात का विश्वास रखे कि वे अवश्य आएँगे। मैंने जब उससे पूछा कि क्या वह श्रीकृष्ण की कृपा का अनुभव कर पा रही है, तो उसने कहा कि वह कर पा रही है। वह यह भी जानना चाहती थी कि इस प्रकार का प्रार्थनामय भाव रखने के लिए वह अपने दर्द को कैसे सहन कर सकती है। इसपर मैंने गौरी माताजी की कहानी उसे सुनाई, कि कैसे अंत समय तक जगत्तारिणी माताजी उसके एक ओर थीं (और विद्या दूसरी ओर) और वे उसे बार-बार यही दोहरा रहीं थीं, “प्रभुपाद कहते थे कि यदि तुम हरे कृष्ण जपोगी तो तुम्हें कोई दर्द नहीं होगा।” जगत्तारिणी माताजी के अनुसार वह अपने दर्द सहन कर पाई। व्रजलीला इस बात से प्रेरित हुई और धन्यवाद किया, किन्तु उसे वह शिक्षा देते हुए मैं स्वयं को बड़ा अयोग्य अनुभव कर रही थी।

अगले दिन मैं उसके लिए राधा-कृष्ण के चित्र लाई। ये वही चित्र थे जो अन्तकाल में हमने उसके सामने पकड़ रखे थे। जब मैंने उन चित्रों को उसे दिखाया, तो वृन्दावन विलासिनी माताजी, जो वहीं थीं, ने कहा, “देखो तो! वे तुम्हारे पास आ गए।” और वास्तव में ऐसा लगा भी कि वे वहाँ हैं। व्रजलीला ने एक मधुर मुस्कान दी जब हम उन्हें उसके सामने दीवार पर लगा रहे थे।

अपने जाने के दो दिन पहले मैंने व्रजलीला से प्रार्थना करी कि वह श्रीकृष्ण से मिलने पर मेरी ओर से एक विशेष प्रार्थना करे। उसने सोचा और विनम्रता से कहा, “मैं श्रील प्रभुपाद को आपकी प्रार्थना देने का प्रयास करूँगी। मैं श्रील प्रभुपाद से मिलने की आशा रखती हूँ।” उसने इतने विश्वास से कहा कि मैं बड़ी प्रसन्न हो

गई यह सोचकर कि श्रील प्रभुपाद मेरी प्रार्थना सुनेंगे – मेरी निजी प्रार्थना। गंधर्विका गिरीधारी ने बाद में मुझे बताया कि व्रजलीला को नहीं लगता कि वह श्रीकृष्ण के मिलने योग्य है किन्तु उसे विश्वास है कि वह श्रील प्रभुपाद से मिल सकेगी।

आपका बहुत-बहुत धन्यवाद महाराज, और आपके शिष्यों का भी बहुत-बहुत धन्यवाद जिन्होंने व्रजलीला का इतना ध्यान रखा और इस दिव्य लीला में अपनी भूमिका बखूबी निभाई और एक विशेष जीव की सहायता करी। इस सब से मेरा विश्वास बहुत गहरा हुआ है।

वैजयंती माला दासी

यह मेरे लिए बड़े सम्मान की बात है की मुझे व्रजलीला की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। आरम्भ से ही उसने मुझमें मातृत्व का भाव जगाया, और इस प्रकार परस्पर व्यवहार रखा कि मुझे लगा कि हमारे बीच सम्बंध का यही उपयुक्त भाव है। यह भाव अंत तक रहा, जब उसने अपना शरीर छोड़ा और अपने सम्वंध की वास्तविक प्रकृति उजागर की। वास्तव में वह मुझे आश्रय प्रदान कर रही थी। किसी तरह उसने मुझे अपनी सेवा करने का अवसर दिया, और मैंने उसकी सेवा उसकी सहायता करने के भाव से की। जैसे उसकी स्थिति अधिक बिगड़ी वैसे उसे अधिक सहायता की आवश्यकता पड़ी और मैंने उसे और अधिक समय दिया। किन्तु उसके प्रयाण के बाद मैं यह समझ पाई कि वास्तव में वह वड़ी गहराई से मेरी सहायता कर रही थी, और मैं अब तक वह सब समझने का प्रयास कर रही हूँ जो मैंने इस अनुभव से बटोरा है। जब भी हम उसके पास सत्संग या जप करने के लिए जाते, वह बहुत प्रसन्न होती। वह हमसे तब तक बोलती रहती जबतक वह थक न जाती। फिर वह शांति से लेटी रहती और सुनती। अकसर बीच में वह प्रश्न पूछती जिससे यह पता लगता है कि वह कितनी सतर्क थी। जब उसे सुनने में कठिनाई होने लगी वह लगातार कोसती, "मुझे शाप लगा है। मैं श्रीकृष्ण के बारे में नहीं सुन सकती।

व्रजलीला, अपनी सेवा करने देने के लिए मैं तुम्हारी बड़ी आभारी हूँ। तुम्हारा मधुर स्वभाव और विनम्रता ने सभी का हृदय जीत लिया और हमें इससे बहुत कुछ सीखने को मिला। गौड़ीय वैष्णव आचार्यों की प्रार्थनाओं को, जिन्हें तुम पूरी निष्ठा से गाती भी थीं, स्मरण कर तुमने अपनी स्मरण-शक्ति का एकदम उचित उपयोग किया। एक आदर्श वैष्णवी की भाँति तुम सबका बड़ा आदर करती थीं और कभी भी प्रजल्प में समय व्यर्थ नहीं करती थीं। तुमने कभी मृत्यु का भय नहीं माना। तुम्हारी पीड़ा तुम्हें बड़ा कष्ट पहुँचाती थी और यह देखकर हमारा हृदय भी कंदन करता था। जब तुम्हें उस पीड़ा से मुक्ति मिली तो मैं बहुत निश्चिंत हुई।

गंधर्विका गिरिधारी, आपका बहुत-बहुत धन्यवाद कि आपने मुझे सहायता करने का अवसर प्रदान किया।

मैंने कभी किसी को एक वैष्णव की ऐसी सेवा करते नहीं देखा जैसाकि तुमने अपनी प्रिय गुरुबहन की सेवा की। मुझे नहीं मालूम था कि दो भक्तों के बीच ऐसा स्नेह भी हो सकता है। मैं हमेशा सुनती हूँ कि एकमात्र माँ का प्रेम ही निस्वार्थ प्रेम के भाव के सबसे नजदीक है, किन्तु मुझे लगता है कि व्रजलीला के लिए तुम्हारे प्रेम ने उसे भी पीछे छोड़ दिया। उसकी सेवा

करते हुए तुमने अपनी सामान्य शारीरिक आवश्यकताओं की भी परवाह नहीं की। तुम हर आधे घंटे बाद जग जातीं, तुम कभी भी व्रजलीला की अनवरत जरूरतों से अधीर नहीं हुईं, कभी तुमने अपना भोजन एक

बार बैठ कर समाप्त किया। मालिश करना, पंखा झलना, भोजन खिलाना, अनुवाद करना, इंतजाम करना, दिन रात हर मिनट उसके साथ कृष्णकथा की चर्चा करना, तुमने वह सब किया जो चाहिए था। तुमने अपनी निष्काम, समर्पित और अप्रतिबंधित सेवा से अपने गुरु के हृदय में स्थान बना लिया। तुम अपनी सेवा में इतनी अप्रतिबंधित थीं कि तुमने अपना घर भी बेच दिया ताकि तुम अपने गुरु और गुरुबहन की सर्वोत्तम सेवा कर सको। मैं गुरु और वैष्णवों के प्रति तुम्हारी भक्ति की एक बूँद की भिक्षा माँगती हूँ।

इंद्रद्युम्न महाराज, आपका धन्यवाद कि आपने अपनी भूमिका इतनी अच्छी तरह निभाई। आप चिंतित थे कि यदि आप पोलैण्ड से अपना प्रचार कार्य बीच में छोड़कर आए तो सैंकड़ों बद्धजीवों को कृष्णभक्ति के सम्पर्क में आने का अवसर नहीं मिल पाएगा। किन्तु वृन्दावन आने का निर्णय लेकर आपने सैंकड़ों वैष्णवों को कहीं अधिक गहरे स्तर पर प्रेरित किया, हालांकि आपने यह सोचा नहीं था कि ऐसा होगा। अपने कोमल हृदय के कारण आपने स्वयं को श्रीकृष्ण के हाथों का एक बहुमूल्य उपकरण बनना स्वीकार किया।

परिशिष्ट 2

व्रजलीला की डायरी से कुछ उद्धरण

जुलाई 22, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

कल कोई मेरे लिये वृन्दावन के कल्प-वृक्ष के फूल की एक पंखुड़ी लेकर आया। ऐसा वृक्ष किसी की भी सच्ची मनोकामना को पूरी करने में सक्षम होता है, और उस पंखुड़ी से, जो स्वयं वृक्ष के प्रभाव से भिन्न नहीं है, मुझे कुछ माँगने का अवसर मिला।

जबसे मुझे बीमारी के कारण अपनी अवश्यंभावी मृत्यु के बारे में पता लगा है, मुझे ऐसी इच्छा हो रही है कि मैं वृन्दावन जाकर अपना शरीर त्यागूँ। मैं यह आतुरता से कामना कर रही थी कि एक दिन मुझे ऐसे किसी कल्प वृक्ष की एक पंखुड़ी मिल जाए जिससे मैं अपनी मनोकामना पूर्ण करने के लिए प्रार्थना कर सकूँ। परन्तु अब मेरे मन में कुछ अन्य विचार आ रहे हैं। मैं उस सेवा के बारे में सोच रही हूँ जो मेरे गुरुदेव ने मुझे दी है। वे चाहते हैं कि मैं एक शुद्ध भक्त बनूँ और यह शरीर छोड़ने के पश्चात पुनः आध्यात्मिक जगत लौट जाऊँ। वे चाहते हैं कि जैसे-जैसे मैं अपनी मृत्यु के निकट पहुचुँ मैं अपनी अनुभूतियों के बारे में सबको बताऊँ। उन्होंने मुझे अन्यों के लिये एक आदर्श उदाहरण बनने का निर्देश दिया है, जिसे मैं तब ही पूरा कर सकती हूँ जब मैं बड़ी तीव्र गति से कृष्णभक्ति में आगे बढ़ूँ। तत्पश्चात, जब मैं श्रीकृष्ण से सच्चे हृदय से प्रार्थना करूँगी, वे मुझपर कृपा करेंगे जिसे मैं अपना शरीर त्यागने से पहले सबके साथ बाटूँगी।

मैं अपने इस निश्चय में दृढ़ हूँ क्योंकि यह सेवा मेरे गुरु महाराज और श्रील प्रभुपाद के लिए है। वे प्रतीक्षा में हैं कि कब मैं यह सेवा करूँगी। और उन्हें प्रसन्न करने का बस एक ही तरीका है कि मैं यह सेवा पूर्ण कर दिखाऊँ।

अब मुझे अपने गुरु महाराज और श्रीकृष्ण के चरणकमलों को अपने हृदय में स्थापित करना है, और फिर श्रीवृन्दावन धाम भी साक्षात वहाँ प्रवेश कर जाएगा। इस प्रकार गुरु महाराज के चरणकमलों से मिली शुद्ध प्रेमाभक्ति को मैं कभी अपने हृदय से नहीं गँवा पाऊँगी। इस लक्ष्य की प्राप्ति केवल गुरु महाराज को प्रसन्न करने पर ही सम्भव है। यही कारण है कि मैं उनकी आज्ञा का पालन करने के लिए इतनी आतुर हूँ।

उन्होंने ही मुझे कहा था कि वह समय अवश्य आएगा जब मैं तीव्र गति से आगे बढ़ूँगी। उन्होंने कहा, "उस समय जब श्रीकृष्ण की कृपा तुमपर होगी तो तुम अपने को हममें कईयों से बहुत आगे निकला पाओगी।" किन्तु मेरा लक्ष्य किसी से आगे निकलना या आध्यात्मिक आकाश में स्थान प्राप्त करना नहीं है (कम से कम मैं ऐसी मानसिकता के विरुद्ध संघर्ष कर रही हूँ)। मैं कामना करती हूँ कि काश मैं पहले से ही इतनी दृढ़ होती क्योंकि मेरे लिए यह सेवा मेरे गुरु महाराज की आज्ञा है और मैं उन्हें प्रसन्न करना चाहती हूँ। मैं जानती हूँ कि मेरे लिए इतनी तीव्रता से आगे बढ़ना बहुत कठिन होगा, क्योंकि ऐसा करने के लिए मुझे

अपनी सारी भौतिक अभिलाषाऐं पीछे छोड़ देनी होंगी। किन्तु मैं उन सभी कठिनाईयों को स्वीकार करूँगी, क्योंकि मुझे पूरा विश्वास है कि मेरे गुरु महाराज मुझे कभी अकेला नहीं छोड़ेंगे। वे निश्चित रूप से मेरी सहायता करेंगे क्योंकि यह सेवा स्वयं उन्होंने मुझे दी है।

अतः उस कल्पवृक्ष से मैं प्रार्थना करती हूँ, "कृपया मुझे अपने गुरु महाराज की आज्ञा पालन करने में सहायता करें। मैं अपने गुरु महाराज के चरणकमलों को अपने हृदय में स्थापित करने के लिए बहुत अधीर हूँ। श्रील गुरुदेव को प्रसन्न करके मैं श्रीकृष्ण को भी प्रसन्न कर सकूँगी। फिर सम्भवतः श्रीकृष्ण मुझे एक दिन श्रीवृन्दावन धाम में राधाकुण्ड की धूल में लोटने की अनुमति दे देंगे। मैं प्रार्थना करती हूँ कि अपने गुरु महाराज के आदेश के पालन करने की आकाँक्षा के साथ-साथ स्वयं को सिद्ध बनाने की आकाँक्षा मेरे हृदय में बनी रहे। कृपया मुझे इतनी शक्ति दें कि उनके प्रति मैं अपनी सेवा को निभा पाऊँ। और यह आकाँक्षा अधिक से अधिक बलवती हो।"

जुलाई 24, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

परम आदरणीय श्रील गुरुदेव एवं श्रीकृष्ण,
मैं आपसे क्षमा की भीख माँगती हूँ। मैं आपके साथ अपने व्यवहार में कितनी नादान हूँ। यह स्वीकार करते हुए मुझे बड़ा कष्ट हो रहा है कि मैं स्वयं को आपका भक्त समझती हूँ, किन्तु मैं अभी भी कितनी स्वार्थी हूँ। उस परम लक्ष्य की प्राप्ति का प्रयास करने में, मैं देख सकती हूँ कि आने वाले समय में मेरे लिए सम्भावनाएँ बेहद कम हैं। किन्तु फिर भी, मैं हमेशा आपका मार्गदर्शन अपने साथ अनुभव करती हूँ।

श्रील गुरुदेव, एक बार आपने कहा था कि यदि कार्य करने वाला उत्साही हो तो एक वर्ष में किया जाने वाला कार्य सात दिनों में भी किया जा सकता है। किन्तु मेरा हृदय इतना मलीन है कि मैं यह सेवा सात दिनों में नहीं पूरी कर पाऊँगी। मैं आपकी कृपा की याचना करती हूँ ताकि जितना शीघ्र हो सके इसे पूरा कर सकूँ।
मेरे विचारों में श्रील गुरुदेव मुझसे कहते हैं, "मैं जानता हूँ कि यह व्यवहारिक दृष्टि से तुम्हारे लिए असम्भव लगता है। किन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि तुम यह कर सकती हो। श्रीकृष्ण की कृपा के लिए पूरी निष्ठा से प्रार्थना करो और तुम्हें यह समझ आ जाएगा कि तुम्हें कैसे अपनी सेवा करनी है। बस उनका नाम जपती रहो और उनकी कृपा के लिए प्रार्थना करती रहो। नाम जपो और अपना हृदय श्रीकृष्ण की कृपा के लिए खोल दो।"

हे श्रीकृष्ण, आप कितने दयालु हैं। इस समय मैं जो कर रही हूँ वह सब बेहद एकतरफा है, किन्तु मैं आपकी सेवा करने के लिए बहुत व्याकुल हूँ। कृपया मुझे शिक्षा दें! मैं कामना करती हूँ कि एक दिन मैं आपके नामों के जप से सही मायने में आपका गुणगान, और अपनी एक शुद्ध, निष्ठावान प्रार्थना अर्पण कर सकूँगी। किन्तु

इस समय मैं स्वयं को बहुत अयोग्य अनुभव कर रही हूँ।
मेरे विचारों में श्रील गुरुदेव मुझसे कहते हैं, "बस अपनी साधना करती रहो। अपने जप पर ध्यान दो। लगी रहो! बस इस विधि का पालन करती रहो। नाम जप को पूर्णतया स्वयं को समर्पित कर दो। प्रयास करो।" (नहीं। पिछली बार उन्होंने "प्रयास करो" नहीं किन्तु "करो" कहा था।)

आज सवेरे मंदिर में कीर्तन इतना प्रेरणादायी नहीं लगा। मात्र इतने से ही मैं जप करने में प्रेरणा खो बैठी। वास्तव में, श्रीकृष्ण मेरी परीक्षा ले रहे थे। वे चाहते हैं कि मैं जप के माध्यम से शद्ध नाम लूँ। वे चाहते हैं कि मैं श्रील प्रभुपाद की सरलतम् कक्षाओं में कही गईं उनकी शिक्षाओं को सुनुँ। आज मैं पावन नामों को अपनी मलीनता तथा अनर्थों के कारण नहीं सुन पाई।
हे कृष्ण, हे श्रील गुरुदेव, वह दिन कब आएगा जब मैं आपकी कृपा को समझ पाऊँगी?

जुलाई 25, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

श्रील गुरुदेव, मेरा हृदय एक पत्थर के समान कठोर है। मैं बहुत नीरस हूँ, जिसके भीतर कोई भक्तिमय उद्गार नहीं हैं। आप मुझे जो दे रहे हैं मैं उसका मूल्य नहीं समझ सकती हूँ। किन्तु मुझपर कृपा करें कि मैं पावन नामों का जप कर सकूँ।

जुलाई 27, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

आज एक बार फिर मैं अपनी इच्छा पूरी करने के लिए भीख माँग रही हूँ। वह इच्छा है कि मैं अपने गुरु की आज्ञा पूरी कर सकूँ।

मुझे नहीं मालूम कि मैं अपना शरीर त्यागने कभी वृंदावन जा सकूँगी, किन्तु मैं आशावान् हूँ कि मैं अपने गुरु महाराज की इच्छा पूरी करने की अभिलाषा करना जारी रखूँगी। मैं भगवान् से इस प्रकार की कृपा के लिए प्रार्थना करती हूँ कि मैं वह कर पाऊँ जो मेरे गुरु महाराज मुझसे चाहते हैं। मैं श्री वृन्दावन धाम से प्रार्थना करती हूँ, “कृपया मेरे हृदय में प्रकट हो जाएँ, क्योंकि मैं चाहती हूँ कि मेरे गुरु महाराज के चरणकमल वहाँ पर निवास करें। मैं चाहती हूँ कि मुझे भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों की सेवा करने का अवसर प्राप्त हो।”

हे कृष्ण, मेरी आपसे यही विनती है। कृपया मेरे लिए अपने गुरु की आज्ञा का पालन करना सम्भव बना दें। उन्होंने मुझे आज्ञा दी है कि मैं आपके चरणकमलों में पूर्णतया समर्पित हो जाऊँ। कृपया मुझे ऐसा करने दें। कृपया मुझे ऐसा करने की शक्ति दें। मैं इस एकतरफा प्रयास को और जारी नहीं रखना चाहती। हे कृष्ण, कृपया मैं आपसे बड़ी विनम्रता और निष्ठा से निवेदन करती हूँ।

प्रिय श्रील गुरुदेव, प्रिय श्रीकृष्ण, कृपया मुझे क्षमा कर दें कि मैं आपके समक्ष इस प्रकार रो रहीं हूँ। मैं योग्य बनने के लिए बेहद आतुर हूँ ताकि मैं हृदय की गुहार आप दोनो तक पहुँचा सकूँ। आपकी स्पष्ट यादगार मेरे मन में बनी रहे और मैं अपनी विनम्र तथा सच्ची प्रार्थनाएँ आपको अर्पण कर सकूँ। कृपया मुझे कभी न भुलाएँ।

जुलाई 28, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

प्रिय श्रील गुरुदेव, प्रिय श्रीकृष्ण,

आप दोनो मेरे प्रति कितने कृपालु हैं। मैं नहीं जानती कि आपकी सेवा करने की मेरी अभिलाषाएँ सही हैं या नहीं।

कभी-कभी मैं सोचती हूँ कि वृंदावन जाने की मेरी इच्छा के कारण मैं बहुत विशेष हूँ क्योंकि मैं अपना शरीर एक पावन स्थान पर छोड़ूँगी और एक विशेष गंतव्य पर पहुँचुंगी। मुझे लगता है कि ऐसी मानसिकता शोचनीय है। ऐसे विचार मेरे अहंकार के कारण हैं। किन्तु मैं आपकी इच्छा को स्वीकारना चाहती हूँ। हे श्रील गुरुदेव, मैं इसके लिए प्रार्थना करती हूँ।

कल गंधर्विका ने मुझे बताया कि जल्दी ही उसके साथ वृंदावन जाना सम्भव सकता है। किन्तु वह मुझे चेताती रहती है कि वृंदावन में रहना बड़ा कठिन होगा। वहाँ रहने के कारण मेरा जीवन और कम तथा मेरे शारीरीक कष्ट और गंभीर हो सकते हैं।

हे गुरुदेव, आप मुझे वहाँ जाने की आज्ञा तब नहीं देंगे जब तक मैं अंतिम परीक्षा के लिए तैयार न हो जाऊँ। किन्तु मैं जानती हूँ कि मैं तैयार नहीं हूँ, यह तो साफ पता लगता है। हे कृष्ण, मेरी आपसे प्रार्थना है कि मुझे इतनी शक्ति दें कि मैं वह निर्णय स्वीकार कर सकूँ। मैं कुछ ढूँढ रही हूँ, वह जो मुझे समझना चाहिए ताकि मैं तैयार हो सकूँ। वह कमी क्या है? वह अनुभूति क्या है जिसे प्राप्त करना इतना आवश्यक है? प्रिय श्रील गुरुदेव, मुझे लगता है कि मुझे पावन नामों के बारे में, जो आपने मुझे दिए हैं, जरा भी समझ या जरा भी आसक्ति नहीं है। मैं अकेले कुछ भी नहीं कर सकती, कृपया मेरी सहायता करें। मैं आपकी भक्ति में आपका अनुसरण करने के लिए उत्सुक हूँ।

शिष्य को चाहिए कि वह पूर्णतः शरणागत हो, जो हृदय में उत्पन्न होती है। आपका शिष्य होने के नाते यह हमारा लक्ष्य है कि हम हृदय से शरणागत हों। आपके पास वह शक्ति है जिससे आप हमें अपनी शुद्धता और निष्ठा से हमें आकर्षित कर सकते हैं। आप हमें आपका अनुसरण करने के लिए पुकार रहे हैं। अगर मेरे पास यह कृपा नहीं होती तो मैं नहीं जानती मेरा क्या होता? कृपया मुझे आपका अनुसरण करने दें। मैं आपकी सहायता के बिना कुछ भी नहीं हूँ। मेरे पास अपनी कोई शक्ति नहीं है। हे कृष्ण, हे गुरुदेव, मेरे हृदय के स्वामियों, कृपया मेरी सहायता करें!

आपके निष्ठावान भक्त अपनी शुद्ध इच्छाओं से आपको प्रसन्न करते हैं। मैं भी अपना जीवन इस प्रकार जीना चाहती हूँ। कभी-कभी यह बहुत कठिन होता है। मैं एक सच्ची शिष्या बनना चाहती हूँ जो हर समय अपने

गुरु के चरणकमलों को अपने हृदय में रखे। काश यह इच्छा और बलवती बनें। श्रील गुरुदेव, कृपया मुझे ऐसा करना सिखाएँ।

हे कृष्ण, हालांकि मैं जानती हूँ कि मेरी इच्छाएँ सही हैं किन्तु अपनी निष्ठा को लेकर मैं आशंकित हूँ। मैं जानती हूँ कि मैं मूर्ख और निष्ठाहीन हूँ, क्योंकि मैं अभी भी पावन नामों का ठीक से जप नहीं कर पाती हूँ। किन्तु मैं यह वचन देती हूँ कि मैं प्रयास करती रहूँगी। हे कृष्ण, हे गुरुदेव, कृपया मुझे सिखाएँ कि जप कैसे करना चाहिए। मैं आप दोनो से बार-बार गुहार लगा रही हूँ। कृपया मुझे बाँधने वाली वे सब रस्सियाँ काट डालें, कृपया मेरे अनर्थों को समाप्त करने में मेरी सहायता करें। मैं सुधरना चाहती हूँ। कृपया मेरी सहायता करें। मेरी सहायता करें कि मैं यह सदा याद रख सकूँ कि मैं कितनी अधम हूँ। तब मैं हर दिन नई ऊर्जा के साथ आपसे प्रार्थना कर सकूँगी।

जुलाई 30, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

आदरणीय श्रील गुरुदेव, हे मेरे भगवान् श्रीकृष्ण,

आपकी कृपा के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद जो मुझे आपसे हर रोज मिलती है। सच कहूँ तो आपकी कृपा ही मेरा एकमात्र सहारा है। मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ कि इस कृपा के बहाव को कभी न रोकें, हालांकि मैं अज्ञानतावश इसकी कद्र नहीं कर पाती हूँ।

मुझे ऐसा लगता है कि विषमतम परिस्थितियाँ जैसे गम्भीर रोग अथवा मृत्यु ही हमें भगवान् के प्रति पूर्ण शरणागत बनाती हैं। मैं देख सकती हूँ कि यदि कोई लापरवाह अथवा आलसी है तो श्रीकृष्ण शीघ्र ही इस प्रकार की कठिनाईयाँ उसके जीवन में भेजते हैं। इसलिए मुझे लगता है कि जीना मरने के मुकाबले कहीं अधिक भारी परीक्षा है। यदि मैं अपनी जानलेवा बीमारी से बेपरवाह हो जाऊँ तो श्रीकृष्ण की शरण लेने के प्रति भी आलसी हो जाऊँगी। और फिर मायादेवी अपना जलवा दिखाने लगती हैं – "तुम एकदम अधम हो। तुमने अपने स्वामी से मूँह मोड़ लिया है, अब मैं तुम्हें सबक सिखाती हूँ।" किन्तु मैं श्रीकृष्ण की शरण इस दबाव में नहीं लेना चाहती हूँ कि मैं मरने वाली हूँ। मैं तो उस क्षण के आने के पहले ही शरणागत हो जाना चाहती हूँ। मैं वास्तव में पूर्ण निष्ठा के साथ शरणागत होना चाहती हूँ।

हे कृष्ण, आप कृपावश मुझे जीवित रहने दे रहे हैं, और यह मेरी अभिलाषा है कि मैं आपसे हर रोज प्रार्थना कर सकूँ और अपने हर दिन को अपना अंतिम दिन समझ सकूँ। मैं अपने गुरुदेव से भी उसी प्रकार प्रार्थना करना चाहती हूँ मानो कि मैं बस मरने ही वाली हूँ और वे मुझे सबसे अधिक प्रिय हैं।

मेरी वास्तव में यही अभिलाषा है कि श्रीकृष्ण और श्रील गुरुदेव मेरे प्रियतम मित्र बनें, मैं उनकी कृपा का गुणगान कर सकूँ जो मुझे उनसे मिल रही है, और उन्हें हृदय से धन्यवाद कह सकूँ। मेरे लिए बड़ा कठिन है इस बात का ध्यान करना कि मुझमें कितने दोष हैं, मेरे हृदय में कितनी धूल जमा है, और मैं कितनी लाचार हूँ। मैं कितनी कमजोर हूँ, मैं सम्भवतः सफल न हो पाऊँ।

मैं प्रार्थना करती हूँ कि मैं कभी भी ये शिकायत न करूँ कि आपने मेरी ओर ध्यान नहीं दिया या आप मुझे भूल गए, और इस प्रकार के बेफिजूल विचार।

हे श्रील गुरुदेव, मेरी एकमात्र अभिलाषा है कि मैं निरंतर हमारे आध्यात्मिक सम्बंध के बीज को सींचती रहूँ और आपके प्रति किसी भी अपराध की घासफूस को सावधानी से निकाल फेंकूँ। आपके साथ मेरा सम्पर्क ही मुझे जीवन देता है।

अगस्त 3, 1993 नोवोरोसिस्क, रूस

कल कितना अद्भुत दिन था। कल बलराम पूर्णिमा थी। भगवान् बलराम ही आदि गुरू हैं और सभी गुरूजनों में उनकी ही शक्ति होती है। अतः मैंने उन्हें एक प्रार्थना अर्पित की। मैं गुरू-शिष्या के सम्बंध के बीज को सींचना चाहती हूँ, अपने गुरु महाराज की दासी बनना चाहती हूँ, और उनके चरणों के प्रति गहरा प्रेम विकसित करना चाहती हूँ। मेरी इच्छा है कि मेरी उनकी शिक्षाओं में अगाढ़ श्रद्धा हो। मैं भगवान् बलराम से प्रार्थना कर रही थी कि मुझे अपने गुरु महाराज का सम्पर्क अपने हृदय में प्राप्त करने दें। मुझे भी सेवा का वही भाव देने की कृपा करें जो मेरे गुरू महाराज का अपने गुरूदेव श्रील प्रभुपाद के लिए है।

यही मेरा लक्ष्य है। किन्तु वास्तविकता कुछ और है। मैं स्वतंत्र हूँ। इसे कैसे बदला जा सकता है? यह तो असंभव है! मैं अपने गुरु महाराज की यह आज्ञा कि मैं शरीर नहीं एक आत्मा हूँ को कैसे पूर्ण कर सकती हूँ? (उन्होंने मुझे ऐसा करने के लिए कहा था जब मैं पिछली बार उनसे मिली थी।) हालही में, एक माताजी जिनके पास एक छोटा बच्चा है हमारे आश्रम में रहने के लिए आई हैं, उनका बच्चा सारे दिन रोता है। मेरे आस-पास अलग-अलग भक्त कई बातों को लेकर चिंता-फिक्र में हैं। गंधर्विका बड़ी कठिनाई में है मुझे वेदी की पीछे वाली दीवार पर एक चित्र पेंट करना है जो ठीक से नहीं बन पा रहा है। मैं कैसी भक्त हूँ? मैं अपनी चिंताओं, शारीरिक अक्षमताओं और दुर्बलताओं से चकराई हुई हूँ। ऐसा प्रतीत होता है कि यह उपयुक्त समय है कि मैं भगवान् कृष्ण से सहायता के लिए प्रार्थना करूँ।

अगस्त 4, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

मैं अभी भी चारों ओर से चिंताओं से घिरी हुई हूँ, किंतु मेरे हृदय ने जो एक बासी फल की तरह मुरझा गया है, मेरे जप को मशीनी बना दिया है। मुझे शर्म आनी चाहिए!

हे मेरे भगवान् कृष्ण, आदरणीय श्रील गुरुदेव, मैं अपने भीतर निष्ठा की एक बूँद विकसित करना चाहती हूँ, ताकि मैं आपसे प्रार्थना कर सकूँ, अपना हृदय आपके समक्ष प्रकट कर सकूँ। कृपया मेरे तिरस्कार न करें।

मैं यह भलीभाँति जानती हूँ कि मैं स्वयं ही अपनी समस्याओं का कारण हूँ। मैंने अपना जप ध्यान से नहीं किया, इसीलिए मैंने जप के लिए स्वाद गँवा दिया। आपको प्रसन्न करने के लिए मुझे अच्छी तरह जप करना होगा।

हे मेरे प्रभु, मैं आपके समक्ष पूर्ण समर्पण करने के लिए अत्यंत आतुर हूँ! आदरणीय गुरुदेव, मेरी आपसे विनती है कि आप मुझे सिखाऐं कि अपने विचारों द्वारा मैं कैसे आपसे जुड़ी रह सकती हूँ। आपने एक बार

ऐसा किया था एक वर्ष पूर्व जब हम भक्तिन कृष्णजीवनी के घर पर आपकी प्रतीक्षा कर रहे थे। आपके बहुत देर बाद वहाँ पधारे थे। कृपया मेरे हृदय में बने रहें।

अगस्त 10, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

महामंत्र का जप करते हुए मैं भगवान् से विनती नहीं कर पा रही हूँ। इससे मैं दीनता का अनुभव कर रही हूँ।

हे मेरे प्रभु, आपसे विनती करने में जो दिव्य स्वाद प्राप्त होता है क्या वह मैंने खो दिया है? क्या ऐसा मेरी लापरवाही या आलस्य के कारण तो नहीं?

किन्तु हे गुरुदेव, हे श्रीकृष्ण, इन विनतियों के बिना मैं कुछ भी नहीं हूँ। यह सब मेरी ही गल्ती के कारण है, मैं जानती हूँ।

अगस्त 12, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

हे मेरे भगवान् श्रीकृष्ण,

आप मुझपर कितने दयालु हैं। मुझे भक्ति में नए-नए अनुभव प्रदान करने के आप मुझे कितने सारे अवसर प्रदान करा रहे हैं। आज श्रील प्रभुपाद का आविर्भाव दिवस है। मैंने ऐसी कई नईं बातें सीखीं हैं जो मुझे भक्ति में और दृढ़ बनाऐंगी।

कुछ दिन पहले गंधर्विका और बोरिस मेरे बारे में एक ईसाई महिला से चर्चा कर रहे थे जो परलोक संबंधी बातें बताने के लिए जानी जाती है। उसने उन्हें बताया कि मुझे शाप मिला हुआ है और मेरे पास बस तीन और महीने हैं जीने के लिए। सच कहूँ, मुझे स्वयं लगता है कि मृत्यु बहुत निकट है। जब मैंने उसकी बात सुनी तो मुझे लगा कि अपने गुरु की आज्ञा पूरी करने का समय आ रहा है। यह शाप मेरे पूर्व जन्म के कर्मों का परिणाम है। आध्यात्मिक जगत वापस लौटने के लिए मुझे अपने पूर्व जन्म के कर्मों को पूरी तरह भस्म करना होगा। किन्तु क्या मेरे पास उस प्रकार की भक्ति या आध्यात्मिक श्रेय हैं जो मेरे कर्मों को मेरी मृत्यु के आने से पहले भस्म कर सकेंगे? बिल्कुल नहीं।

कुछ भक्त कह रहे हैं कि मुझे उस ईसाई महिला से सहायता लेनी चाहिए कि वह मेरे उस तथाकथित शाप को प्रभावहीन कर दे। किन्तु मैं ऐसे किसी भी टोने-टोटके करने वाले व्यक्ति पर विश्वास नहीं करती चाहे वह ईसाई हो, मुसलमान हो, हिन्दु हो, नास्तिक हो या और कोई हो। न जाने ऐसे कितनों ने मेरा ईलाज करने का प्रयास किया है। इससे बेहतर है कि मैं अपनी मृत्यु के लिए तैयारी करूँ। हालांकि मुझे बहुत साफ-साफ नहीं पता कि यह तैयारी कैसे करनी है, मैं गुरुदेव से पूछुँगी। मेरी परम अभिलाषा तो यह है कि मैं गुरु और कृष्ण में अपने विश्वास को दृढ़ बनाऊँ और इन सब बेकार की बातों को भूल जाऊँ।

आज श्रील प्रभुपाद की व्यास पूजा है। मैंने आज यह महसूस किया कि अब मुझे गुरु और श्रीकृष्ण में अपना विश्वास दृढ़ करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, विशेषकर क्योंकि मेरा जीवन अब बहुत ही छोटा होने वाला है। इसी विश्वास का अभाव अभी मुझमें है।

मैं प्रार्थना कर रही हूँ, "हे श्रील प्रभुपाद, भगवान् कृष्ण ने मुझे अपने गुरु की आज्ञा को पूरा करने का अवसर प्रदान किया है, किन्तु ऐसा करने में अपने आप को अक्षम पाती हूँ। आपके शिष्यों का आपमें बड़ा अटूट विश्वास है। अपने गुरु महाराज में, जो आप ही के आध्यात्मिक पुत्र हैं, ऐसा ही विश्वास प्राप्त करने में कृपया मेरी सहायता करें। मैं उनके साथ गुरु-शिष्य का एक आदर्श संबंध बनाना चाहती हूँ, क्योंकि यही मेरे आध्यात्मिक जीवन का एकमात्र सहारा होगा। श्रील प्रभुपाद, कृपया मेरा मार्गदर्शन करें। इस समय मैं यह नहीं समझ पा रही हूँ कि श्रीकृष्ण मुझसे क्या चाहते हैं, किन्तु कृपया मुझे बताऐं कि उनकी क्या इच्छा है। मुझे उनकी इच्छा को समझने के लिए सही दृष्टी प्रदान करें। हे श्रील प्रभुपाद, कृपया मुझे आपकी कृपा प्रदान करें ताकि मैं अपने गुरु की उतनी ही अच्छी शिष्य बन सकूँ जितने कि वे आपके हैं।"

अगस्त 23, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

(जप आरम्भ करने से पूर्व लिखा गया)

आदरणीय श्रील गुरुदेव, आदरणीय भगवान् श्रीकृष्ण,

कृपया मेरे ऊपर अपनी कृपादृष्टी बनाऐं, कृपया मेरी प्रार्थनाऐं सुनें।

बड़ी आशा के साथ. मैंने अपनी जपमाला पिछले एक मिनट से हाथ में पकड़ के रखी हुई हैं। ये माला मुझे आपसे मिली थी, श्रील गुरुदेव। आपने ही मुझे भगवान् के पवित्र नाम दिए। आपने कहा था, "भगवान् कृष्ण के पावन नाम उनसे अभिन्न हैं।" किन्तु मैं फिर भी आपसे भीख माँग रही हूँ, "मुझे श्रीकृष्ण दे दें।"

मेरी दीक्षा हुए काफी समय बीत गया है, किन्तु मैं तो अभी भी एक नौसिखिया ही हूँ। मृत्यु का क्षण निकट आता जा रहा है, किन्तु मैं अभी भी नाम जप करते समय असावधान रहती हूँ। शीघ्र ही परदा गिर जाएगा और तमाशा खत्म हो जाएगा। समय आने वाला है जब सब कुछ बदल जाएगा। यह विचार मुझे बड़ा डरावना लगता है। यहाँ तक कि मेरा मन भी मेरा साथ छोड़ देगा। मेरे प्रभु, तब ही मैं आपका नाम ठीक से ले पाऊँगी, किन्तु पहले मुझे यह तो विश्वास हो कि आपका नाम ही मेरा एकमात्र आश्रय है। मैं आपके नामों का जप कर रही हूँ किन्तु मेरी भौतिक अभिलाषाएँ अभी भी बनी हुईं हैं। मैं कितनी अबोध और लापरवाह हूँ। क्या आप फिर भी अपनी अहैतुकी कृपा मुझे देंगे? कृपया मुझे उत्तर दें। मुझे एक ऐसे व्यक्ति की तरह चीखना चाहिए जो डूब रहा हो, किन्तु वह चीख कहाँ है? क्या मेरे बचने की कोई जरा भी आशा शेष है? यह विचार कितना भयावह है कि मुझे अभी तक नामजप का स्वाद नहीं लग पाया है। हे मेरे स्वामी, मैं इस बात से बहुत घबराती हूँ कि कहीं मैं आपकी कृपा से हाथ न धो बैठूँ। हालांकि मैं इतनी अधम और नीच हूँ, किन्तु मैं फिर भी आपकी कृपा की याचना करती हूँ। मुझे क्षमा कर दें प्रभु, और आशा की कोई किरण मुझे प्रदान करें। आखिर कब मैं आपके चरणकमलों को कसककर पकड़ पाऊँगी मेरे प्रभु, मेरा हृदय बिल्कुल भी

साफ नहीं है। मैं आपसे भीख माँगती हूँ, कृपया मेरी इंद्रियों को शांत करें और मेरे हृदय में प्रवेश करें। मैं अपने हृदय को ऐसा बनाना चाहती हूँ कि जैसे वो अमृत का बना हो, किन्तु वह तो मात्र श्रील गुरुदेव की कृपा से ही संभव है। चूँकि मैं अपना भार स्वयं उठाए हुए हूँ, मैं अपने अनर्थों के दलदल में धँसी जा रही हूँ, तथा अपने इस विषैले मोह के कारण मैं जप नहीं कर पा रही हूँ। किन्तु हे गुरुदेव, मेरे इस प्रयास को आपका समर्थन प्राप्त है। हे श्रीकृष्ण, कृपया मेरी यह प्रार्थना स्वीकार करें। श्रील गुरुदेव, आशा है आपको मेरी प्रार्थना से प्रसन्न होंगे। मैं प्रार्थना करती हूँ कि मेरी नामजप की अभिलाषा में वृद्धि हो। मैं आपकी ही भाँति पावन नामों के अमृत में डूब जाना चाहती हूँ। हे श्रील गुरुदेव, कृपया मेरा मार्गदर्शन करें।

अगस्त 24, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

आज सवेरे से चूँकि मैं सो नहीं पाई हूँ, इसलिए अपनी क्षमतानुसार मैं भगवान् को प्रार्थनाएँ अर्पित कर रही हूँ। इससे मुझे बड़ा प्रोत्साहन मिल रहा है। मैं देखना चाहती हूँ कि इससे मेरी सेवा पर क्या प्रभाव पड़ता है। मेरे लिए सर्वाधिक मुल्यवान है – कि मैं गुरुदेव और श्रीकृष्ण से प्रार्थनापूर्ण अपील कर सकूँ, तथा अपनी प्रेमपूर्ण प्रार्थनाओं की डोर से उनसे जुड़ी रहुँ। मैं यह लक्ष्य प्राप्त करना चाहती हूँ। मैं भगवान् श्रीकृष्ण की शरण लेना चाहती हूँ ताकि मैं भी उनकी सेवा में उतना ही डूब जाऊँ जितना कि मेरे गुरु महाराज डूबे हुए हैं।

आज सवेरे मैंने श्रीमद्भगवद्गीता खोली, और पहला ही श्लोक जो मैंने देखा वह था – मनमना भव मद्भक्तो। मुझे यह अनुभूति हुई कि यही वास्तव में सबसे ऊँचा स्थान है – भगवान् श्रीकृष्ण के लिए पूरी तन्मयता और भाव से की गई प्रेममयी भक्तिमय सेवा। धीरे-धीरे मैं यह समझ पाई कि ऐसा करने पर मैं वास्तव में स्वयं को गुरु और श्रीकृष्ण की उपस्थिति में पाती हूँ। मैं स्वयं को एक तुच्छ जीव के रुप में देखती हूँ जो गुरुदेव और श्रीकृष्ण के चरणकमलों से प्रार्थना कर रहा है। क्या मेरी तुच्छ प्रार्थनाऐं भगवान् श्रीकृष्ण को आनन्द दे सकेंगी? क्या मैं यह भगवान् की प्रसन्नता के लिए कर रही हूँ? मुझे नहीं मालूम कि मेरी नीरस पुकार श्रीकृष्ण को प्रसन्न कर रही है या नहीं। किन्तु एक दिन मैं उनकी एक योग्य सेविका बनना चाहती हूँ, और तब अवश्य ही मैं अपनी प्रार्थनाऐं श्रीकृष्ण के परम सुख के लिए जपूँगी। मैं जानती हूँ कि केवल वे - श्रील गुरुदेव और स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण, जिनसे मैं विनती कर रही हूँ – मेरा मार्गदर्शन कर सकते हैं कि योग्य कैसे बनना है।

मेरे परम आदरणीय श्रील गुरुदेव, मैं आपके अतिरिक्त और कहाँ जा सकती हूँ? कृपया मेरी सेवा स्वीकार करें। कृपया मेरी अपूर्ण प्रार्थनाओं को स्वीकार करें। भगवान् कृष्ण तो इतने ऊँचे स्थान पर स्थित हैं कि मुझे जरा भी आभास नहीं कि उन्हें कैसे प्रसन्न करना है। इसलिए मैं आपसे भीख माँगती हूँ, कि मुझे सिखाऐं कि उन्हें कैसे प्रसन्न करना है। आदरणीय गुरुदेव कृपया आपसे प्रार्थना करने के प्रयास में मेरी सहायता करें, क्योंकि मैं आपसे अपना सम्पर्क बनाए रखना चाहती हूँ। मैं अपना पूरा प्रयास कर रही हूँ कि मैं अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा पूरा-पूरा दिन श्रीकृष्णभावना में रहूँ और आपसे भी सम्पर्क बनाए रखूँ। कृपया मेरा मार्गदर्शन करें।

अगस्त 25, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

आदरणीय श्रील गुरुदेव, आदरणीय भगवान् श्रीकृष्ण, आपके लिए की गई मेरी सेवाओं में सहायता करने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

आज मैं सारी सेवाऐं, मेरी चित्रकारी समेत, सामान्य रूप से करती रही। किन्तु बिना रुके आधे दिन तक विग्रहों के पीछे वाली दीवार पर पेंटिंग करते रहने से मैं बहुत थक गई। मैं कितनी बड़ी बेवकूफ हूँ। मुझे न जाने कितनी बार कहा गया है कि मुझे थोड़ा सा काम करने के बाद आराम करना चाहिए।

आदरणीय श्रील गुरुदेव, आदरणीय श्रीकृष्ण, इन दिनों मैं अपने हृदय का मार्जन करने में लगी हुई हूँ। ऐसा करने में मैंने अपनी कई कमियाँ ढूँढी हैं। किन्तु मैं देख सकती हूँ कि आप दोनों मेरा उत्साह बढ़ा रहे हैं और प्रेरित कर रहे हैं। मैं चाहती हूँ कि मेरी यह इच्छी ऐसे ही बनी रहे। हालांकि मेरे ये प्रयास पूर्ण नहीं हैं, किन्तु मुझे खेद है कि मैं आपको अभी मात्र यही अर्पित कर सकती हूँ। मैं सोचती हूँ कि इससे श्रील गुरुदेव थोड़ा बहुत तो प्रसन्न होंगे ही और मेरी तरफ अनुकूल दृष्टि

बनाए रखेंगे क्योंकि इससे पहले कभी भी मैंने इस प्रकार प्रयास नहीं किया है। अरे हाँ, मुझे याद आया मैं इस प्रकार तब प्रयास कर रही थी जब कुछ महीने पहले आप स्वयं मुझे प्रशिक्षित कर रहे थे। किन्तु इससे पहले कभी भी मैंने अपने प्रयासों को भक्तिमय सेवा समझ कर नहीं किया था। अब मैं इन्हें भक्ति समझकर कर रही हूँ। श्रील गुरुदेव मैं आपसे भीख माँगती हूँ कि मुझे हमेशा आपके साथ रहने दें।

(यह प्रार्थना "पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण" पुस्तक से "उद्धव की वृन्दावन यात्रा" अध्याय पढने के बाद लिखी गई।)

हे वृन्दावन के वासियों, भगवान् श्रीकृष्ण के उत्कृष्ट सहभागियों, आप सदैव वृन्दावन में ब्रज के राजकुमार का स्मरण करते हुए निवास करते हैं। मेरे दण्डवत् प्रणाम स्वीकार करें। आपने उद्धवजी से पूछा कि क्या श्यायमसुन्दर को अपनी गोंओं, अपनी गोपियों, अपने गोवर्धन पर्वत, वृन्दावन के वनों की घास की याद आती है। आपने पूछा कि क्या वे सबकुछ भूल चुके हैं। आपने पूछा कि क्या वे अपने मित्रों और सम्बंधियों के पास लौटकर आऐंगे। आप सदैव श्रीकृष्ण के स्मरण में डूबे रहते हैं, तथा बाकि सबकुछ भूल जाते हैं। केवल आपका जरा सा अनुसरण करने मात्र से हम सफल हो सकते हैं। श्रील प्रभुपाद ने आपके कृष्ण प्रेम से प्रभावित होने के कारण कहा था कि हमें आपका अनुसरण करने की अभिलाषा अपने भीतर विकसित करनी चाहिए। अतैव मैं प्रार्थना करती हूँ कि कृपा करके मुझे आपकी दया के अमृत की कुछ बूँदें दान में दे दें।

अगस्त 26, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

आज का दिन बड़ा व्यस्त था। कई बातें हुईं। ऐसा लगा कि जैसे सारा दिन कई भागों में बँट गया हो। गंधर्विका श्रील गुरुदेव से मिलने सेंट पीटर्सबर्ग चली गई और मुझे अपनी पेंटिंग करने में बहुत कठिनाई हुई। किन्तु मैं देख सकी कि हर परिस्थिति में भगवान् भीतर से मेरा मार्गदर्शन कर रहे थे, और हर परिस्थिति

मेरे लिए एक नयी समझ लेकर आई। भविष्य में जब भी आवश्यकता पड़े तो मैं आज के दिन को याद करना चाहूँगी।

मुझे अपने गुरु महाराज की आज्ञा का पालन करना है। हे श्रील गुरुदेव, आप देख सकते हैं कि आज मैं आपकी सेवा करने के लिए बार बार निश्चय कर रही हूँ, हालांकि मेरे हृदय की अभिलाषा है कि मैं आपकी सेवा करूँ, किन्तु मुझे यह बचकाना ही लगता है। आज मुझे लगता है कि मैं कहीं न कहीं असफल रही हूँ। इन सब घटनाओं ने मेरे भीतर एक नई उथल-पुथल पैदा की है। मैं अपनी प्रार्थनाओं में ध्यान नहीं लगा पाई और मैं श्रील प्रभुपाद की थोड़ी-बहुत ही पुस्तकें पढ़ पाई। मुझे शर्म आनी चाहिए! कृपया मुझे माफ कर दें। मैं डरी हुई हूँ कि मेरा अहंकार बढ़ रहा है। मुझे लगा कि मैंने कुछ सफलता प्राप्त कर ली है, किन्तु आज मैंने देख लिया कि ऐसा कुछ नहीं था। कृपया चीजों को यथारूप देखने में मेरी सहायता करें। आज मैं भगवद्गीता का नौंवा अध्याय "परम गुह्य ज्ञान" पढ़ रही हूँ। यह सम्पूर्ण ज्ञान है और मैं यह ज्ञान चाहती हूँ और उसे जीवन में उतारना चाहती हूँ। किन्तु मैं स्वयं को पूर्णतया अयोग्य पाती हूँ। हालांकि मैं अभी भी मायादेवी के हाथ में एक खिलौना ही हूँ, किन्तु हे श्रील गुरुदेव, हे श्रीकृष्ण, मेरा तिरस्कार न करें। मैं आपसे बार-बार निवेदन करती हूँ।

सितम्बर 10, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

आदरणीय भगवान् श्रीकृष्ण,

कृपया मुझे स्वयं से बचाऐं। आपकी कृपा से मैं यह देख रही हूँ कि मैं आपके पवित्र नामों के प्रति कितनी बड़ी अपराधी हूँ। मुझे लगता है वो समय अवश्य आएगा जब मुझे इन अपराधों का मूल्य चुकाना पड़ेगा। मुझे यह भी लगता है कि मैं अपने गुरु महाराज के निर्देशों का पालन करने में बेहद कमजोर हूँ। वास्तव में, भक्ति के विधि विधानों का पालन करते समय साधक को भगवान् के विचारों में एकदम मग्न होना चाहिए। ऐसा करने के लिए मुझे अपने दिखावों को एक तरफ रख देना चाहिए अन्यथा मैं किसी नाटक के अभिनेता से अधिक और कुछ नहीं कहलाऊँगी। इस सब का क्या लाभ? मैं तो मात्र एक घटिया बहरूपिया हूँ।

मैं अपने गुरु महाराज के निर्देशों का पालन करने में स्थिरता प्राप्त करना चाह रही हूँ। मैं अपने व्यवहार की, अपनी सेवा भावना की जाँच करती रही हूँ। भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा से मुझे अपनी कमियाँ दिखाई गईं हैं, किन्तु मैंने आशा नहीं छोड़ी है। मैं स्वयं को सुधारने के लिए अवसर प्रदान करने के लिए प्रार्थना कर रही हूँ। अब मुझे दिखाई दे रहा है कि भगवान् मुझे एक ऐसा अवसर दे रहे हैं। मैं अपने गुरुदेव की सेवा बेहतर करने का प्रयास कर रही हूँ। काश मैं ऐसा कर पाऊँ।

जब गंधर्विका मेरे पास नहीं होती है तो मुझे बहुत कठिनाई होती है। जब भी वो कहीं चली जाती है तो मुझे लगता है कि मैं एक ऊँचे स्थान से गिरकर क्रूर वास्तविकता में फँस जाती हूँ। हर बार मैं यही सोचती हूँ कि मैं इससे निकल नहीं पाऊँगी, और मुझे लगता है कि मैं अपनी भक्ति में पूर्णतया असहाय हूँ। वह कल वापस आ जाएगी। वह सेंट पीटर्सबर्ग में गुरुदेव के साथ अपनी मुलाकात के बारे में मुझे बताएग

सितम्बर 12, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

परिस्थिति में थोड़ा फेर बदल है। गंधर्विका कल से पहले नहीं आ पाएगी। मुझे उसकी कमी खल रही है।

किन्तु श्रील गुरुदेव जल्दी ही यहाँ आने वाले हैं। उन्होंने सितम्बर 19 को यहाँ आने का वादा किया है। हमेशा की तरह, श्रीकृष्ण मुझे मेरी कमियाँ उनके आने के बस थोड़ा पहले ही दिखा रहे हैं। मैं देख रही हूँ कि मैंने उनकी अनुपस्थिति में उनकी कितनी खराब सेवा की। वे मुझसे बड़े अप्रसन्न होंगे। अब मैं उन्हें एक पत्र लिखना चाहती हूँ।

श्रील गुरुदेव को लिखा गया पत्र (जो कभी भेजा नहीं गया):

आदरणीय श्रील गुरुदेव,

मैं आपके चरणकमलों में सादर प्रणाम करती हूँ। श्रील प्रभुपाद की सदा जय हो।

मैं इस बात को लेकर चिंतित हूँ कि मैं आपकी बिल्कुल भी अच्छी शिष्या नहीं हूँ और आपके प्रति बिल्कुल भी समर्पित नहीं हूँ। मैं बड़ी पापिन हूँ और मेरा हृदय बड़ा मैला है। कृपया मुझे क्षमा करें।

यह आपकी मुझपर असीम कृपा थी कि आपने मुझे अपनी शिष्या स्वीकार किया, यह जानते हुए कि मुझे भक्तों के सम्पर्क में आए मात्र कुछ ही दिन हुए थे। आपने मुझसे यह वचन लिया कि मैं आपकी हमेशा सेवा करती रहूँगी। शीघ्र ही, कुछ महीनों बाद, आपने मुझे दूसरी दीक्षा प्रदान करी, इस बात के बावजूद कि मुझमें ब्राह्मणी के गुण नहीं थे। शीघ्र ही मैंने अपने को भक्तों के बीच पाया जो मेरा अनुसरण करना चाहते थे, जैसे कि मैं कोई वरिष्ठ भक्त हूँ। आपने मुझपर दया करके अपनी कृपा प्रदान करी, किन्तु मेरे अनर्थ अनजाने ही बढ़ते रहे, यहाँ तक कि जप करते समय भी। कितनी शर्म की बात है! मैं आपको यह बताना चाहती हूँ कि हाल ही में मैं यहाँ नोवोरोसिस्क में तंत्र-मंत्र जानने वाली एक ईसाई महिला से मिली थी। उसने मेरे बारे में मुझे कई बातें बताईं, कि मुझे कैसे शाप मिला इत्यादि। कृपया मुझे क्षमा करें। जब भी मैं इस प्रकार के लोगों के साथ संग करती हूँ, मुझपर उनका बड़ा प्रभाव पड़ता है और मेरे दुर्गुण उजागर होने लगते हैं। मैं बड़ी अस्थिर हूँ और इस प्रकार के भौतिकतावादी लोगों से बड़ी जल्दी प्रभावित हो जाती हूँ। मैं उनसे डरती हूँ। मैं प्रयास कर रही हूँ कि मैं अपनी श्रद्धा भगवान् के पावन नामों की शुद्ध करने वाली शक्ति में लगाऊँ।

मैं बड़ी अस्थिर हूँ और धोखेबाज़ हूँ। मैं हर समय नाम-अपराध करती रहती हूँ। मुझे आपसे क्षमा माँगनी होगी। मुझे मालूम है कि अपराध करने के बाद हमें उस व्यक्ति से क्षमा-याचना करनी चाहिए जिसके प्रति हमने अपराध किया हो। किन्तु मैं पावन नामों के सामने कैसे जाऊँ क्योंकि मुझे उनकी पवित्रता का जरा भी अहसास नहीं है। अतः मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ, कृपया मुझे क्षमा कर दें। मैं आपकी सदैव ऋणी रहूँगी और मैं आपकी सेविका बनना चाहती हूँ। किन्तु इस समय मैं भ्रम में डूबी हूई हूँ। हालांकि मैं गुप्त रूप से माया के हाथों का खिलौना बनने की अभिलाषा रखे हुए हूँ, किन्तु कृपा करके मुझे अकेला न छोड़ें। मैं महसूस करती हूँ मैं इतनी योग्य नहीं हूँ कि वृन्दावन धाम जा सकूँ, किन्तु मैं आपके आशीर्वाद की कामना करती हूँ कि मैं वहाँ जा सकूँ। मात्र मेरी अयोग्यता के कारण मुझे इस कृपामय अवसर से वंचित न करें।

आपकी सेविका,

सितम्बर 25, 1993, रोस्तोव-न-दोनु, रूस

मैं रोस्तोव में हूँ। श्रील गुरुदेव यहाँ आए थे, और हमने उनकी सेवा उनका प्रवचन सुनकर की। उनका संग मेरे लिए बहुत मूल्यवान है, हो सकता है कि इस जीवन में यह मैं उनसे अंतिम बार मिल रही हूँ। इसी कारण मैं उनसे प्रेरणा लेने के लिए इतनी आतुर हो रही हूँ और उनसे तीव्रता के साथ जुड़ना चाहती हूँ। मैं निरंतर प्रार्थना करती रहती हूँ कि एक दिन उनके चरणकमल मेरे हृदय में प्रकट होंगे। उनके जाने के बाद मैं बर्बाद जैसी नजर नहीं आना चाहती। मुझे उनकी सेवा में और अधिक दृढ़ बनना होगा। मैं उनके चरणकमलों में प्रणाम अर्पित करना चाहती हूँ और उनके जाने के बाद भी वहीं लेटे रहना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ कि मेरे हृदय में उनके प्रति आसक्ति की एक चिंगारी बनी रहे। गुरुदेव, मैं चाहती हूँ कि मैं हमेशा आपसे विनती करने के लायक बनी रहूँ, और इस प्रकार मैं सदा सुरक्षित रहूँगी, आपके चरणों की छत्रछाया में।

कल मुझे बड़ी कृपा प्राप्त हुई- मैंने श्री श्री निताई निमाईसुंदर के दर्शन किए। वे कितने सुंदर थे। माधवी और मैं उस कमरे में थे, और हम उनके आनन्द के लिए कुछ भजन गा रहे थे। जब हमने "जय श्री कृष्ण चैतन्य…" गाना आरम्भ किया तो मुझे वे अपने बहुत निकट लगे, और मैं चकित थी कि अचानक ही मुझे उनकी जय-जयकार बार-बार, अनंत रूप से, करने की इच्छा होने लगी। हालांकि मैं ऐसा कर नहीं पाती हूँ किन्तु श्रील गुरुदेव के प्रति मैं इसी भाव में रहना चाहती हूँ – और फिर मैं कभी नहीं भटकूँगी।

सितम्बर 28, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

मैं फिर से नोवोरोसिस्क में हूँ। श्रील गुरुदेव पोलैण्ड गए हैं। किन्तु जैसा की अक्सर होता है, इस बार मैं उजड़ी हुई अथवा उदास नहीं अनुभव करूँगी। उन्होंने मुझे बड़ी कृपा दी है। कल उन्होंने हमें वृन्दावन जाने की अनुमति दे दी। उनके अनुमति देने के बाद मैंने उनसे एक प्रश्न किया और मैं उनके उत्तर से बहुत प्रभावित हुई। मैंने उनसे कहा कि अपना शरीर छोड़ने के लिए वृन्दावन जाने को लेकर मैं व्यग्रता का अनुभव कर रही हूँ। मैंने उनसे कहा कि पवित्र धाम पर जाते हुए किसी के मन में कोई भौतिक आकांक्षा नहीं होनी चाहिए।

उन्होंने उत्तर दिया कि श्रीकृष्ण इस संसार में धाम को प्रकट हमारे शुद्धिकरण के लिए करते हैं। जब हम शुद्ध हो जाते हैं तो हम बेहतर सेवा कर पाते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि शरीर त्यागने के लिए वृन्दावन परिपूर्ण स्थान है। उन्होंने मुझे निर्देश दिया कि मैं वहाँ जाऊँ और पूर्ण रूप से कृष्णभावनाभावित बनकर अपने आपको मृत्यु के लिए तैयार करूँ।

एक अन्य प्रश्न के उनके उत्तर ने मुझे और भी अधिक प्रभावित किया। मैंने उनसे कहा, "श्रीईशोपनिषद के सतरहवें श्लोक में एक भक्त प्रर्थना करता है कि मेरा यह शरीर जलकर राख हो जाए और प्राणवायु बाहरी वायु में विलीन हो जाए।" मैंने पूछा कि क्या इसका तात्पर्य यह है कि एक भक्त शरीर छोड़ने की कामना

करता है। उन्होंने उत्तर दिया, “कई प्रकार से यह शरीर हमारी सेवा में एक बाधा है। एक भक्त की कामना होती है कि वह भगवान् की निर्विघ्न सेवा करता रहे, किन्तु यह शरीर कभी बीमार पड़ता है और धीरे-धीरे वृद्ध होता जाता है। अतः अपने जीवन के अंत में एक भक्त खुशी-खुशी अपना शरीर त्यागता है ताकि वह भगवान् की सेवा एक आध्यात्मिक रूप में कर सके।”

मैं उस उत्तर के बारे में बाद में काफी देर तक सोचती रही। मृगतृष्णाओं से भरे इस संसार को छोड़ने की और श्री कृष्ण के चरणकमलों में अपनी सेवा अर्पण करने की मेरी अभीलाषा दिन प्रतिदिन और अधिक बलवती होती जा रही है।

एक रात मुझे सपने में विग्रह, श्री श्री राधा गोविंद माधव, के दर्शन हुए। मैं भगवान् गोविंद माधव के चरणकमलों को बड़ी स्पष्टता से देख पाई। वे सोने की तरह चमक रहे थे। उस पल मैंने सोचा, “यही सच्चा खजाना है, जो केवल एक भक्त को ही प्राप्त हो सकता है। भौतिकतावादी लोग ऐसे खजाने को खोजने में पागल हो जाते हैं किन्तु वे नहीं जानते कि यह खजाना कैसा दिखता है और न ही ये जानते हैं कि इसे खोजना कहाँ चाहिए। कितने दुर्भाग्यशाली हैं वे!”

सितम्बर 30, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

मेरे आदरणीय गुरुदेव,

मेरी सहायता करने के लिए और भगवद्धाम् लौटने के मेरे इस प्रयास में मुझे आगे धकेलने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। आदरणीय गुरुदेव, मैं एक बार फिर आप तक पहुँचना चाहती हूँ। मैं आपकी उपस्थिति और ध्यान पाने के लिए प्रयास कर रही हूँ, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि आप मेरे समक्ष तुरन्त उपस्थित हो जाएें और मेरे प्रश्नों का उत्तर प्रदान करें। नहीं, आप मेरे गुरुदेव हैं और मेरी आपसे प्रार्थना से आपको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होनी चाहिए। बल्कि, मेरा यह कर्त्तव्य है कि मैं सदैव आपके चरमकमलों में रहूँ और अपने आध्यात्मिक जीवन में सुरक्षा और निर्भयता का अनुभव करूँ।

हाल ही में हम आपकी 1993 की व्यास-पूजा पुस्तक पढ़ रहे थे। मैं नरसिंहनन्द प्रभु की श्रद्धांजलि पढ़कर अचम्भित रह गई। अपनी श्रद्धांजलि में वे लिखते हैं, “हमारे लक्ष्य तक आप हमारा बड़ी सावधानी से मार्गदर्शन करते हैं। मेरा लक्ष्य है आपके चरणकमलों के प्रति शुद्ध भक्ति।” यह पढ़कर मैं सोचने लगी, “किन्तु मेरा लक्ष्य क्या है?” न जाने कितनी बार मैंने कहा है, “मैं शुद्ध नाम लेना चाहती हूँ, मैं एक शुद्ध भक्त बनना चाहती हूँ, मैं अपने गुरुदेव के चरणकमलों में समर्पण करना चाहती हूँ।” किन्तु इस प्रकार के विचार रटे-रटाए कम्युनिस्ट नारों की भाँति प्रकट होते हैं। मैं इन्हें सैंकड़ों बार दोहराती हूँ, किन्तु वास्तव में मेरे हृदय में क्या है? क्या मैं अपनी समस्त भौतिक इच्छाओं का त्याग करने के लिए तैयार हूँ? इस बिस्तर में बीमार पड़ी मैं यही सब सोचती रहती हूँ।

भगवद्धाम् लौटने की मेरी इच्छा अधिक बलवती हो रही है। किन्तु मैं वहाँ जाकर क्या करूँगी यदि मुझे अपने गुरु महाराज से पूरी तरह से प्रशिक्षण न मिला हो? और उचित सेवा भावना विकसित किए बिना आध्यात्मिक जगत जाने का क्या लाभ? और फिर अपने गुरुदेव के चरणकमलों में मेरी भक्ति है ही कितनी? हाँ, इस भौतिक जगत को त्यागने की मेरी इच्छा काफी प्रबल है, किन्तु मेरे पास भक्ति कहाँ है? बिना भक्ति के आध्यात्मिक जीवन असम्भव है, है न? आध्यात्मिक जीवन का उदय ही इसलिए होता है क्योंकि हम गुरु और श्रीकृष्ण की संतुष्टि के लिए प्रयास करते हैं।

हे श्रील गुरुदेव, जब मैं अपने हृदय में झाँक कर देखती हूँ तो डर जाती हूँ। मैं कितनी अशुद्ध हूँ और मेरी पास जो भक्ति है उसकी कीमत बड़ी तुच्छ है। किन्तु यह बताएँ, कि क्या शुद्ध भक्ति और गुरु के चरणकमलों के प्रति पूर्ण आसक्ति से अधिक कीमती और कुछ हो सकता है?

श्रील गुरुदेव, मैं इस तथ्य की अनुभूति करना चाहती हूँ कि गुरु के चरणकमलों के प्रति पूर्ण आसक्ति से अधिक मूल्यवान और कुछ नहीं हो सकता है। मैं यही अभिलाषा चाहती हूँ। इस अनुभूति से मेरे भीतर उपस्थित समस्त भौतिक इच्छाएँ समाप्त हो जाएँगी।

अक्तूबर 3, 1993, नोवोरोसिस्क, रूस

ऐसा कहा जाता है कि एक शिष्य के लिए उसके गुरु की आज्ञा उसके जीवन का परम कर्त्तव्य होती है। न जाने कितनी बार मैंने यह सुना है: “परम कर्त्तव्य” और “गुरु की आज्ञा में विश्वास”। किन्तु जब मैं स्वयं को देखती हूँ तो पाती हूँ कि मेरा विश्वास कितना शिथिल और छोटा है। कोई यह कह सकता है कि अपने गुरु से तुम्हें जो निर्देश प्राप्त हुए हैं वे कुछ खास नहीं हैं। ये निर्देश हैं हरे कृष्ण महामंत्र का जप और श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों का अध्ययन। किन्तु मुझे तो यही निर्देश बड़े महान लगते हैं। इन निर्देशों का पालन करते रहने के लिए मुझे स्वयं को लगातार शुद्ध करते रहना होगा।

इस बार जब श्रील गुरुदेव यहाँ आए थे तो मैंने मूर्खतावश उस अवसर का लाभ नहीं उठाया। मैं अपनी बाहरी परिस्थितियों और अपने अशांत मन के कारण असमंजस में थी। हालांकि मैं गुरुदेव के कितना निकट थी, किन्तु मैं लगभग बहरी बनी रही। मुझे उनके द्वारा दिया गया एक भी लेक्चर याद नहीं है। किन्तु गुरुदेव की उपस्थिति की शक्ति मात्र ने भगवान् के पावन नामों में मेरे विश्वास को दृढ़ बनाया।

अक्तूबर 25, 1993, सेंट पीटर्सबर्ग, रूस

7 अक्तूबर से मैं यहाँ गंधर्विका के साथ हूँ। वो अपना घर बेचने में व्यस्त है तथा कागज़, सर्टीफिकेट, घोषणा-पत्र आदि जमा करने में लगी हुई है। वृन्दावन जाने में बड़ी कठिनाईयाँ हैं। मैं स्वयं को तैयार कर रही हूँ कि जो भी हो मैं उसे भगवान् की इच्छा मानकर संतुष्ट हो सकूँ। जैसा कि गंधर्विका कह रही थी, कि एकमात्र वस्तु जो हमारे बस में है वह है सही इच्छा का होना। वह मुझे समझा रही थी, “तुम प्रार्थना करो, ‘हे श्री

कृष्ण, मुझे बस आपके चरणकमलों के थोड़ा और नजदीक आने दें। यदि आप नहीं चाहते कि हम वृन्दावन आएँ, तो हमें बस आपके चरणों में कोई स्थान दे दें।' "

हमें वृन्दावन धाम में कई कठिनाईयों का सामना करना होगा। किन्तु इन कठिनाईयों के अतिरिक्त वहाँ भगवान् के बहुत से शुद्ध और पहुँचे हुए भक्त भी होंगे और वास्तव में उनके पास ही सबसे कीमती खजाना होगा। वे हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं, धाम में प्रवेश करने में सहायता कर सकते हैं, और धाम में वास करने के लिए उचित योग्यता प्रदान कर सकते हैं। वे हर हाल में अपनी-अपनी सेवाओं में लगे रहते हैं और कभी भी गर्व नहीं करते अपने खजाने पर। यह खजाना है श्रीकृष्ण क चरणकमलों के प्रति अनुराग एवं भक्ति। उनके मन में कभी भी इस खजाने का उपभोग स्वयं के लिए करने की लालसा नहीं रहती।

न ही मुझे घमण्ड करना चाहिए। मेरी अभिलाषा है कि मैं भगवान् को प्रसन्न करूँ, उनकी सेवा करूँ न कि वृन्दावन में आनन्द भोगूँ। हालांकि मेरा हृदय अभी भी मलीन है मुझे भगवान् के सामने ऐसे ही उपस्थित होना चाहिए, और इसी अवस्था में भगवान् की और उनके भक्तों की सेवा करने का अपना भरपूर प्रयास करना चाहिए। मेरे गुरु सावधानी से वृन्दावन में मेरा मार्गदर्शन कर सकते हैं। मैं प्रार्थन करती हूँ कि मैं अपनी प्रगति को लेकर घमण्ड न करूँ, बल्कि शुद्ध बनने का प्रयास करूँ ताकि गुरु और श्रीकृष्ण की सेवा निष्ठापूर्वक कर सकूँ। इस प्रकार यह प्रक्रिया निभाते हुए, एक दिन मुझे बास्तविक वृन्दावन में प्रवेश करने का अवसर मिलेगा जहाँ मैं गुरु और श्रीकृष्ण की पूर्णतया शुद्ध भावना से सेवा कर सकूँगी।

आदरणीय श्रील गुरुदेव, मैं आपकी सेवा कब कर पाऊँगी? निजी भोगवृत्ति का विषैला सर्प कभी-कभी मेरे हृदय को डस लेता है। आपकी कृपा जो मुझे मिली है उसके कारण मेरी आपके प्रति सेवा बढ़नी चाहिए, किन्तु यह सर्प इस कृपा को भी निगलना चाहता है। हे पावन नाम, आप ही इस प्रकार की पापमयी इच्छाओं के बीज का नाश कर सकते हैं।

नवंबर 14, 1993, श्री वृंदावन धाम, भारत

हम इस पावन धाम में पहुँच गए हैं। हे श्रीकृष्ण, ऐसा लगता है कि मैं अपने घर एक लम्बे समय बाद लौटी हूँ। धीरे-धीरे, यहाँ फिर से चीजें जानी पहचानी लगने लगी हैं। मेरी हृदय से इच्छा है कि मैं श्रीकृष्ण के लिए अपना लगाव विकसित करूँ, जो श्रील गुरुदेव की कृपा से एक दिन कृष्णप्रेम में परिवर्तित हो सके।

हे मेरे श्रीकृष्ण, आप यहाँ वृन्दावन में सदैव उपस्थित रहते हैं, यह आपका घर है। मैं आपके घर में अतिथि नहीं बनना चाहती हूँ। कृपया मुझे अपना मान कर स्वीकार करें। मैं आपकी शरण में स्वयं को समर्पित करती हूँ और आपसे प्रार्थना करती हूँ। कृपया मुझे शक्ति दें कि मैं आपसे प्रार्थना शुद्ध प्रेम के साथ कर सकूँ, क्योंकि मैं ऐसा करने में पूर्णतः अयोग्य हूँ। मैं कितनी मैली हूँ। मुझपर कृपा करें। मैं आपकी उपस्थिति का अनुभव करना चाहती हूँ। सदा अपने गुरुदेव के चरणकमलों में स्थित रहते हुए, अपनी प्रार्थनाओं में मैं आपका यशगान करना चाहती हूँ।

नवंबर 20, 1993, श्री वृंदावन धाम, भारत

कई दिन बीत गए हैं। सबकुछ कितनी तेजी से बदल रहा है। मैं यहाँ कृपा के विशाल सागर से अमृत की बूँदें लपक रही हूँ। 16 नवम्बर को हमने श्रील प्रभुपाद तिरोभाव दिवस मनाया। उनके शिष्यों की उपस्थिति के कारण मैं श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति अनुभव कर पाई। मैं अब यह समझ सकती हूँ कि कैसे श्रील गुरूदेव श्रील प्रभुपाद के निर्देशों के प्रति इतना समर्पित हो पाए और कैसे वे उनके आदेशों को व्यवहारिक रूप दे पाते हैं। श्रील प्रभुपाद सदैव मेरे गुरुदेव की व्यक्तिगत रूप से सहायता करते हैं। वाकई, श्रील गुरुदेव सदैव श्रील प्रभुपाद के साथ होते हैं।

सायं 7.20 पर, जब श्रील प्रभुपाद ने इस धरा से प्रस्थान किया था, उनके कुछ सन्यासी शिष्य, उनकी समाधि के पास पहुँचे, उनकी मूर्ति की परिक्रमा की और फिर उनके निवास की ओर चल दिए।

मैं भी वहाँ गई। वह निवास श्रील प्रभुपाद के शिष्यों से भरा हुआ था। उनको देखकर लगता था मानो श्रील प्रभुपाद वहाँ उपस्थित हैं। हम वही कीर्तन कर रहे थे जो 16 वर्ष पूर्व हुआ था। मैंने एक माताजी को देखा, जो प्रभुपाद की शिष्या हैं और उनके निवास की देखरेख करती हैं, वे रो रहीं थीं। मैंने गोविंद स्वामी को देखा। वे प्रभुपाद के बिस्तर के किनारे खड़े थे। उन्होंने अपना दण्ड पकड़ रखा था और अपना मस्तक दण्ड के सहारे टिका रखा था। सर्वप्रथम उन्होंने कीर्तन आरम्भ किया, तदोपरान्त किसी अन्य ने कीर्तन जारी रखा।

श्रील प्रभुपाद अब हमारे बीच में नहीं हैं, किन्तु वह घटना अब भी उनके शिष्यों के हृदय में हमेशा के लिए बनी हुई है। मैं यह भी सोच रही थी कि आज के दिन वे हमारे हृदय में भी आ सकते हैं, यदि हम अन्य भक्तों का संग करते हुए, गुरु समान उनके शिष्यों के चरणकमलों के निकट बने रहें।

जनवरी 11, 1994, श्री वृंदावन धाम, भारत

आदरणीय श्रील गुरुदेव,

अपने लिए आपका ध्यान चाहने की गुस्ताखी करने पर कृपया मुझे क्षमा करें। आप इस समय बहुत दूर हैं, किन्तु मैं आपके चरणकमलों के निकट से निकट आना चाहती हूँ। यहाँ वृन्दावन में मैं न जाने कितने ऐसे लोगों से मिलती हूँ जो आपकी कृपा मुझतक पहुँचाते रहते हैं। उनका संग लेकर, उनके निकट आकर, मैं आपके निकट अपने को पाती हूँ। जब भी मैं उनसे सुनती हूँ, तो आपकी सेवा करने की मेरी भावना अधिक बलवती होती जाती है।

हे गुरुदेव, मैं जानती हूँ कि मैं शुद्ध नहीं हूँ और यह भी कि मैं बहुत मूर्ख हूँ, किन्तु मैं इन उत्तम वैष्णवों की सेवा करना चाहती हूँ, क्योंकि ऐसा करने से मैं आपके निकट आने लगती हूँ। कृपया मुझे बताएँ कि मैं इनके लिए क्या कर सकती हूँ।

मैं आपका बहुत आभार प्रकट करती हूँ कि आपने मुझे यहाँ वृन्दावन में रुकने दिया। मैं यहाँ अपना पूरा जीवन बिताना चाहती हूँ और आपकी सेवा करना सीखना चाहती हूँ और शुद्ध होना चाहती हूँ। मेरी अभिलाषा है कि मैं आध्यात्मिक आकाश में स्थित वृन्दावन में प्रवेश करने के योग्य बन सकूँ। आदरणीय गुरुदेव, मैं आपके चरणकलों में सम्पूर्ण आदर के साथ बार-बार अपना शीश झुकाती हूँ।